॥ॐ॥
॥श्री परमात्मने नमः ॥
॥श्री गणेशाय नमः॥

॥ अथर्ववेद संहिता ॥

॥ अथर्ववेद॥

॥ अथ द्वितीय काण्डम्॥

श्री हिंदू धर्म वैदिक एजुकेशन फाउंडेशन
॥ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

विषय सूची

सूक्त १- परमधाम सूक्त..... 5

सूक्त २- भुवनपति सूक्त..... 8

सूक्त ३- आस्रावभेषज सूक्त..... 11

सूक्त ४ – दीर्घायुप्राप्ति सूक्त..... 15

सूक्त ५- इन्द्रशौर्य सूक्त..... 18

सूक्त ६- सपत्नहाग्नि सूक्त..... 22

सूक्त ७- शापमोचन सूक्त..... 25

सूक्त ८- क्षेत्रियरोगनाशन सूक्त..... 28

सूक्त ९- दीर्घायुप्राप्ति सूक्त..... 31

सूक्त १०- पाशमोचन सूक्त..... 34

सूक्त ११- श्रेय: प्राप्ति सूक्त..... 40

सूक्त १२- शत्रुनाशन सूक्त..... 43

सूक्त १३- दीर्घायुप्राप्ति सूक्त..... 48

सूक्त १४- दस्युनाशन सूक्त..... 51

सूक्त १५- अभयप्राप्ति सूक्त..... 54

सूक्त १६- सुरक्षा सूक्त..... 57

सूक्त १७- बलप्राप्ति सूक्त..... 59

सूक्त १८- शत्रुनाशन सूक्त 61
सूक्त १९- शत्रुनाशन सूक्त 63
सूक्त २०- शत्रुनाशन सूक्त 66
सूक्त २१- शत्रुनाशन सूक्त 69
सूक्त २२- शत्रुनाशन सूक्त 72
सूक्त २३- शत्रुनाशन सूक्त 75
सूक्त २४- शत्रुनाशन सूक्त 78
सूक्त २५- पृश्निपर्णी सूक्त 83
सूक्त २६- पशुसंवर्धन सूक्त 86
सूक्त २७- शत्रुपराजय सूक्त 89
सूक्त २८- दीर्घायु प्राप्ति सूक्त 93
सूक्त २९- दीर्घायुष्य सूक्त 96
सूक्त ३०- कामिनीमनोऽभिमुखीकरण सूक्त 100
सूक्त ३१- कृमिजम्भन सूक्त 103
सूक्त ३२- कृमिनाशन सूक्त 106
सूक्त ३३- यक्ष्मविबर्हण सूक्त 109
सूक्त ३४- पशुगण सूक्त 113
सूक्त ३५-विश्वकर्मा सूक्त 116
सूक्त ३६- पतिवेदन सूक्त 119

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त १- परमधाम सूक्त

ब्रह्म और आत्मा का वर्णन

वेनस्तत्पश्यत्परमं गुहा यद्यत्र विश्वं भवत्येकरूपम् ।
इदं पृश्निरदुहज्जायमानाः स्वर्विदो अभ्यनूषत व्राः ॥२,१.१॥

गुहा रुपी अनुभूति अथवा अन्त:करण में जो सत्ता, ज्ञान आदि लक्षण वाला ब्रह्म है, जिसमें समस्त जगत् विलीन हो जाता है, उस श्रेष्ठ परमात्मा को वेन अर्थात प्रकाशवान्-ज्ञानवान् अथवा सूर्य ने देखा। उसी ब्रह्म का दोहन करके प्रकृति ने नाम-रूप वाले भौतिक जगत् को उत्पन्न किया । आत्मज्ञानी मनुष्य उस परब्रह्म की स्तुति करते हैं ॥२,१.१॥

प्र तद्वोचेदमृतस्य विद्वान् गन्धर्वो धाम परमं गुहा यत्।
त्रीणि पदानि निहिता गुहास्य यस्तानि वेद स पितुष्पितासत्॥२,१.२॥

गन्धर्व अर्थात वाणी या किरणों से युक्त विद्वान् अथवा सूर्य के बारे में उपदेश दें । इस ब्रह्म के तीन पद हृदय की गुफा में विद्यमान हैं । जो मनुष्य उसे ज्ञात कर लेता है, वह पिता का भी पिता अर्थात सर्वज्ञ सबके उत्पत्तिकर्ता ब्रह्म का भी ज्ञाता हो जाता है ॥२,१.२॥

स नः पिता जनिता स उत बन्धुर्धामानि वेद भुवनानि विश्वा। यो देवानां नामध एक एव तं संप्रश्नं भुवना यन्ति सर्वा ॥२,१.३॥

वह ब्रह्म हमारा पिता, जन्मदाता तथा भाई है, वहीं समस्त लोकों तथा स्थानों को जानने वाला है। वह अकेला ही समस्त देवताओं के नामों को धारण करने वाला है। समस्त लोक उसी ब्रह्म के विषय में प्रश्न पूछने के लिए ज्ञाता के पास पहुँचते हैं ॥२,१.३॥

परि द्यावापृथिवी सद्य आयमुपातिष्ठे प्रथमजामृतस्य ।

वाचमिव वक्तरि भुवनेष्ठा धास्युरेष नन्वेषो अग्निः ॥२,१.४॥

ब्रह्मज्ञानी ने कहा: मैं शीघ्र ही द्यावा-पृथिवी को तत्त्व दृष्टि से जान गया हूँ, अत: परमसत्य की उपासना करता हूँ। जिस प्रकार वक्ता के अन्दर वाणी विद्यमान रहती है, उसी प्रकार वह ब्रह्म समस्त लोकों में विद्यमान रहता है और वहीं समस्त प्राणियों को धारण तथा पोषण करने वाला है । निश्चित रूप से अग्नि भी वही है ॥२,१.४॥

परि विश्वा भुवनान्यायमृतस्य तन्तुं विततं दृशे कम् ।
यत्र देवा अमृतमानशानाः समाने योनावध्यैरयन्त ॥२,१.५॥

जहाँ अमृत सेवन करने वाले, समान आधार वाले देवगण अथवा अमृत – आनन्दसेवी देवपुरुष विचरण करते हैं, उस ऋत अर्थात् परमसत्या के ताने-बाने को मैंने अनेक बार देखा हैं ॥२,१.५॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त २- भुवनपति सूक्त

ब्रह्म के रूप में सूर्य की आराधना

दिव्यो गन्धर्वो भुवनस्य यस्पतिरेक एव नमस्यो विक्ष्वीड्यः।
तं त्वा यौमि ब्रह्मणा दिव्य देव नमस्ते अस्तु दिवि ते सधस्थम्
॥२,२.१॥

जो दिव्य गन्धर्व, पृथ्वी आदि लोकों को धारण करने वाले एक मात्र स्वामी हैं, वह ही इस संसार में नमस्य हैं । हे परमात्मन् ! आपका निवास स्थान द्युलोक में हैं। हम आपको नमन करते हैं तथा उपासना द्वारा आपको प्राप्त करते हैं ॥२,२.१॥

दिवि स्पृष्टो यजतः सूर्यत्वगवयाता हरसो दैव्यस्य ।
मृडागन्धर्वो भुवनस्य यस्पतिरेक एव नमस्यः सुशेवाः
॥२,२.२॥

समस्त लोकों के एक मात्र अधिपति गंधर्व घुलोक में विद्यमान रहने वाले, दैवी आपदाओं के निवारक तथा सूर्य के त्वचा रूप हैं। वह सबके द्वारा नमस्कार करने तथा प्रार्थना करने योग्य हैं। सबके सुखदाता वह हमें भी सुख प्रदान करें ॥२,२.२॥

अनवद्याभिः समु जग्म आभिरप्सरास्वपि गन्धर्व आसीत्।
समुद्र आसां सदनं म आहुर्यतः सद्य आ च परा च यन्ति
॥२,२.३॥

प्रशंसनीय रूप वाली अप्सराओं से गन्धर्वदेव युक्त हो गए हैं। इन अप्सराओं का निवास स्थान अन्तरिक्ष है। हमें बतलाया गया है कि यह अप्सराएँ वहीं से प्रकट होतीं हैं तथा वहीं चली जाती अर्थात विलीन हो जाती हैं ॥२,२.३॥

अभ्रियह दिद्युन् नक्षत्रियह या विश्वावसुं गन्धर्वं सचध्वे ।
ताभ्यो वो देवीर्नम इत्कृणोमि ॥२,२.४॥

हे देवियो ! आप मेघों की विद्युत् अथवा नक्षत्रों के आलोक में संसार का पालन करने वाले गन्धर्वदेव से संयुक्त होती हैं, इसलिए हम आपको नमन करते हैं ॥२,२.४॥

याः क्लन्दास्तमिषीचयोऽक्षकामा मनोमुहः ।
ताभ्यो गन्धर्वभ्योऽप्सराभ्योऽकरं नमः ॥२,२.५॥

प्रेरित करने वाली, ग्लानि को दूर करने वाली, आँखों की इच्छाओं को पूर्ण करने वाली तथा मन को अस्थिर करने वाली, जो गन्धर्व – पत्नी रूप अप्सराएँ हैं, हम उन्हें प्रणाम करते हैं ॥२,२.५॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त ३- आस्रावभेषज सूक्त

स्राव विरोधी ओषधि का वर्णन

अदो यदवधावत्यवत्कमधि पर्वतात्।
तत्ते कृणोमि भेषजं सुभेषजं यथाससि ॥२,३.१॥

जो मूंज व्यधिनाशक एवं उच्च पर्वत के ऊपर से नीचे लाया जाता है, उसके अग्रभाग वनस्पति को हम इस प्रकार बनाते हैं, जिससे वह आपके लिए श्रेष्ठ औषधि बन जाए ॥२,३.१॥

आदङ्गा कुविदङ्ग शतं या भेषजानि ते ।
तेषामसि त्वमुत्तममनास्रावमरोगणम् ॥२,३.२॥

हे दिव्य प्रवाह ! जो आपसे उत्पन्न होने वाली असीम औषधियाँ हैं, वह अतिसार, बहुमूत्र तथा नाड़ीव्रण आदि रोगों को विनष्ट करने में पूर्णरूप से सक्षम हैं ॥२,३.२॥

नीचैः खनन्त्यसुरा अरुस्राणमिदं महत्।
तदास्रावस्य भेषजं तदु रोगमनीनशत्॥२,३.३॥

प्राणों का विनाश करने वाले तथा देह को गिराने वाले असुर रूप रोग, वर्ण के मुख को अन्दर से फाड़ते हैं; लेकिन वह पूँज नामक औषधि घाव की अत्युत्तम औषधि है । वह अनेकों व्याधियों को नष्ट कर देती हैं ॥२,३.३॥

उपजीका उद्धरन्ति समुद्रादधि भेषजम् ।
तदास्रावस्य भेषजं तदु रोगमशीशमत्॥२,३.४॥

धरती के नीचे विद्यमान जलराशि से व्याधि नष्ट करने वाली औषधि रूप दीमक की बाम्बी की मिट्टी ऊपर आती है,

यह मिट्टी आस्राव की औषधि है। यह अतिसार आदि व्याधियों को शमित करती है ॥२,३.४॥

अरुस्राणमिदं महत्पृथिव्या अध्युद्भृतम् ।
तदास्रावस्य भेषजं तदु रोगमनीनशत्॥२,३.५॥

खेत से उठाई हुई औषधि रूप मिट्टी फोड़े को पकाने वाली तथा अतिसार आदि रोगों को समूल नष्ट करने वाली रामबाण औषधि है ॥२,३.५॥

शं नो भवन्त्वप ओषधयः शिवाः ।
इन्द्रस्य वज्रो अप हन्तु रक्षस आराद्विसृष्टा इषवः पतन्तु रक्षसाम् ॥२,३.६॥

औषधि के लिए प्रयोग किया हुआ जल हर्ष प्रदायक होकर हमारी व्याधियों को शमित करने वाला हो । रोग को उत्पन्न करने वाले असुरों को इन्द्रदेव का वज्र विनष्ट करे । असुरों

द्वारा मनुष्यों पर संधान किए गए व्याधिरूप बाण हम सबसे दूर जाकर गिरें ॥२,३.६॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त ४ – दीर्घायुप्राप्ति सूक्त

जंगिड़ वृक्ष से निर्मित जंगिड़ मणि का वर्णन

दीर्घायुत्वाय बृहते रणायारिष्यन्तो दक्षमाणाः सदैव ।
मणिं विष्कन्धदूषणं जङ्गिडं बिभृमो वयम् ॥२,४.१॥

दीर्घायु प्राप्त करने के लिए तथा आरोग्य का प्रचुर आनन्द अनुभव करने के लिए हम अपने शरीर पर जंगिड़ मणि धारण करते हैं। यह जंगिड़ मणि रोगशामक है तथा दुर्बलता को दूर करके सामर्थ्य को बढ़ाने वाली है ॥२,४.१॥

जङ्गिडो जम्भाद्विशराद्विष्कन्धादभिशोचनात्।
मणिः सहस्रवीर्यः परि णः पातु विश्वतः ॥२,४.२॥

यह जंगिड़ मणि सहस्रों बलों से सम्पन्न होकर जम्भाई बढ़ाने वाली, दुर्बलता पैदा करने वाली, देह को सुखाने वाली तथा अकारण आँखों में आँसू आने वाले रोग से हमारी सुरक्षा करे ॥२,४.२॥

अयं विष्कन्धं सहतेऽयं बाधते अत्रिणः ।
अयं नो विश्वभेषजो जङ्गिडः पात्वंहसः ॥२,४.३॥

यह जंगिड़ मणि सुखाने वाले रोग से हमारी सुरक्षा करती है और भक्षण करने वाली कृत्या आदि का विनाश करती हैं । यह हमारे समस्त रोगों का निवारण करने वालसम्पूर्ण औषधिरूप है, यह पाप से हमारी सुरक्षा करे ॥२,४.३॥

देवैर्दत्तेन मणिना जङ्गिडेन मयोभुवा ।
विष्कन्धं सर्वा रक्षांसि व्यायामे सहामहे ॥२,४.४॥

देवताओं द्वारा प्रदान किया गया, सुखदायक जंगिड़ मणि के द्वारा, हम सुखाने वाले रोगों तथा समस्त रोग कीटाणुओं को संघर्ष में दबा सकते हैं ॥२,४.४॥

शणश्च मा जङ्गिडश्च विष्कन्धादभि रक्षताम् ।
अरण्यादन्य आभृतः कृष्या अन्यो रसेभ्यः ॥२,४.५॥

सन तथा जंगिड़ मणि विष्कंध रोग से हमारी रक्षा करें । इनमें से एक की आपूर्ति वन से तथा दूसरे की कृषि द्वारा उत्पादित रसों से की गई है ॥२,४.५॥

कृत्यादूषिरयं मणिरथो अरातिदूषिः ।
अथो सहस्वान् जङ्गिडः प्र ण आयुंषि तारिषत्॥२,४.६॥

यह जंगिड़ मणि कृत्या आदि से सुरक्षा करने वाली है तथा शत्रुरूप व्याधियों को दूर करने वाली हैं। यह शक्तिशाली जंगिड़मणि हमारे आयुष्य की वृद्धि करे ॥२,४.६॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त ५- इन्द्रशौर्य सूक्त

इन्द्र देव की स्तुति

इन्द्र जुषस्व प्र वहा याहि शूर हरिभ्याम् ।
पिबा सुतस्य मतेरिह मधोश्चकानश्चारुर्मदाय ॥२,५.१॥

हे शूरवीर इन्द्रदेव ! आप आनन्दित होकर आगे बढ़े । आप अपने अश्वों के द्वारा इस यज्ञ में पधारें । परितुष्ट तथा आनन्दित होने के लिए विद्वान् पुरुषों द्वारा अभिषुत किए गए मधुर सोमरस का पान करें ॥२,५.१॥

इन्द्र जठरं नव्यो न पृणस्व मधोर्दिवो न ।
अस्य सुतस्य स्वर्णोप त्वा मदाः सुवाचो अगुः ॥२,५.२॥

हे शूरवीर इन्द्रदेव ! आप प्रशंसनीय तथा हर्षवर्धक मधुर सोमरस के द्वारा उदरपूर्ति करें । इसके बाद अभिषुत

सोमरस तथा स्तुतियों के माध्यम से आपको स्वर्ग की तरह आनन्द प्राप्त हो ॥२,५.२॥

इन्द्रस्तुराषाण्मित्रो वृत्रं यो जघान यतीर्न ।
बिभेद वलं भृगुर्न ससहे शत्रून् मदे सोमस्य ॥२,५.३॥

इन्द्रदेव समस्त प्राणियों के मित्र हैं तथा शत्रुओं पर त्वरित गति से आक्रमण करने वाले हैं। उन्होंने वृत्र या अवरोधक मेघ का संहार किया था। भृगु ऋषि के समान उन्होंने अंगिराओं के यज्ञों की साधनभूत गौओं का अपहरण करने वाले बलासुर का संहार किया था, सोमपान से हर्षित होकर शत्रुओं को पराजित किया था ॥२,५.३॥

आ त्वा विशन्तु सुतास इन्द्र पृणस्व कुक्षी विड्ढि शक्र धियहह्या नः ।
श्रुधी हवं गिरो मे जुषस्वेन्द्र स्वयुग्भिर्मत्स्वेह महे रणाय ॥२,५.४॥

हे शक्तिशाली इन्द्रदेव ! आपको अभिषुत सोमरस प्राप्त हो और आप उससे अपनी दोनों कुक्षियों को पूर्ण करें। हे इन्द्रदेव ! आप हमारे आवाहन को सुनकर, विवेकपूर्वक हमारे समीप पधारें तथा हमारे स्तुति – वचनों को स्वीकार करें और विराट् संग्राम के लिए अपने रक्षण साधनों के साथ हर्षपूर्वक तैयार रहें ॥२,५.४॥

इन्द्रस्य नु प्र वोचं वीर्याणि यानि चकार प्रथमानि वज्री ।
अहन्न् अहिमनु अपस्ततर्द प्र वक्षणा अभिनत्पर्वतानाम् ॥२,५.५॥

वज्रधारी इन्द्रदेव के पराक्रमपूर्ण कृत्यों का हम बखान करते हैं। उन्होंने वृत्र तथा मेघ का संहार किया था। उसके बाद उन्होंने वृत्र के द्वारा अवरुद्ध किए हुए जल को प्रवाहित किया तथा पर्वतों को तोड़कर नदियों के लिए रास्ता बनाया ॥२,५.५॥

अहन्न् अहिं पर्वते शिश्रियाणं त्वष्टास्मै वज्रं स्वर्यं ततक्ष ।

वाश्रा इव धेनवः स्यन्दमाना अञ्जः समुद्रमव जग्मुरापः ॥२,५.६॥

उन इन्द्रदेव ने वृत्र का संहार किया तथा मेघ को विदीर्ण किया। वृत्र के पिता त्वष्टा ने इन्द्रदेव के निमित्त अपने वज्र को तेज किया। उसके बाद गौओं के सदृश अधोमुख होकर वेग से बहने वाली नदियाँ समुद्र तक पहुँचीं ॥२,५.६॥

वृषायमाणो अवृणीत सोमं त्रिकद्रुकेषु अपिबत्सुतस्य ।
आ सायकं मघवादत्त वज्रमहन्न् एनं प्रथमजामहीनाम् ॥२,५.७॥

वृष के सदृश व्यवहार करने वाले इन्द्रदेव ने सोमरूप अन्न को प्रजापति से ग्रहण किया तथा उच्च स्थानों में अभिषुत सोमरस का पान किया। उसके बल से बलिष्ठ होकर उन्होंने बाणरूप वज्र धारण किया तथा हिंसा करने वाले शत्रुओं में प्रथम उत्पन्न हुए इस वीर वृत्रासुर को विनष्ट किया ॥२,५.७॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त ६- सपत्नहाग्नि सूक्त

अग्नि देव की स्तुति

समास्त्वाग्न ऋतवो वर्धयन्तु संवत्सरा ऋषयो यानि सत्या ।
सं दिव्येन दीदिहि रोचनेन विश्वा आ माहि प्रदिशश्चतस्रः
॥२,६.१॥

हे अग्निदेव ! आपको माह, ऋतु, वर्ष, ऋषि तथा सत्य-आचरण समृद्ध करें । आप दैवी तेजस् से सम्पन्न होकर समस्त दिशाओं को आलोकित करें ॥२,६.१॥

सं चेध्यस्वाग्ने प्र च वर्धयहममुच्च तिष्ठ महते सौभगाय ।
मा ते रिषन्न् उपसत्तारो अग्ने ब्रह्माणस्ते यशसः सन्तु मान्ये
॥२,६.२॥

हे अग्निदेव ! आप भलीप्रकार प्रदीप्त होकर इस याजक की वृद्धि करें तथा इसे प्रचुर ऐश्वर्य प्रदान करने के लिए उत्साहित रहें । हे अग्निदेव ! आपके साधक कभी विनष्ट न हों । आपके समीप रहने वाले विप्र कीर्ति-सम्पन्नहों तथा दूसरे अन्य लोग जो यज्ञादि नहीं करते, वह कीर्तिवान् न हों ॥२,६.२॥

त्वामग्ने वृणते ब्राह्मणा इमे शिवो अग्ने संवरणे भवा नः ।
सपत्नहाग्ने अभिमातिजिद्भव स्वे गए जागृह्यप्रयुछन् ॥२,६.३॥

हे अग्निदेव ! यह ब्राह्मण याजक आपकी साधना करते हैं । हे अग्निदेव ! आप हमारी भूलों से भी क्रोधित न हों। हे अग्निदेव ! आप हमारे शत्रुओं तथा पापों को पराजित करके अपने घर में सावधान होकर जाग्रत् रहें ॥२,६.३॥

क्षत्रेणाग्ने स्वेन सं रभस्व मित्रेणाग्ने मित्रधा यतस्व ।
सजातानां मध्यमेष्ठा राज्ञामग्ने विहव्यो दीदिहीह ॥२,६.४॥

हे अग्निदेव ! आप क्षत्रिय बल से भली प्रकार युक्त हों । हे अग्निदेव ! आप अपने मित्रों के स्मथ मित्रभाव से आचरण करें । हे अग्निदेव ! आप समान जन्म वाले विप्रों के बीच में आसीन होकर तथा राजाओं के मध्य में विशेष रूप से आवाहनीय होकर, इस यज्ञ में आलोकित हों ॥२,६.४॥

अति निहो अति सृधोऽत्यचित्तीरति द्विषः ।
विश्वा ह्यग्ने दुरिता तर त्वमथास्मभ्यं सहवीरं रयिं दाः ॥२,६.५॥

हे अग्निदेव ! आप हमारे विषय-विकारों को दूर करें। आप हमारे शरीर को सुखाने वाली व्याधियो तथा पाप में प्रेरित करने वाली दुर्बुद्धियों को दूर करें। आप हमारे शत्रुओं का विनाश करें और हमें पराक्रमी सन्तानों से युक्त ऐश्वर्य प्रदान करें ॥२,६.५॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त ७- शापमोचन सूक्त

पाप का विनाश करने वाली मणि का गुणगान

अघद्विष्टा देवजाता वीरुच्छपथयोपनी ।
आपो मलमिव प्राणैक्षीत्सर्वान् मच्छपथामधि ॥२,७.१॥

पिशाचों द्वारा किए हुए पाप को दूर करने वाली, ब्राह्मणों के शाप को विनष्ट करने वाली तथा देवताओं द्वारा उत्पन्न होने वाली वीरुध् अर्थात दूर्वा औषधि हमारे समस्त शापों को उसी प्रकार धो डालती है, जिस प्रकार जल समस्त मलों को धो डालता है ॥२,७.१॥

यश्च सापत्नः शपथो जाम्याः शपथश्च यः ।
ब्रह्मा यन् मन्युतः शपात्सर्वं तन् नो अधस्पदम् ॥२,७.२॥

शत्रुओं के शाप, स्त्रियों के शाप तथा ब्राह्मण के द्वारा क्रोध में दिए गए शाप हमारे पैर के नीचे हो जाएँ अर्थात् नष्ट हो जाएँ ॥२,७.२॥

दिवो मूलमवततं पृथिव्या अध्युत्ततम् ।
तेन सहस्रकाण्डेन परि णः पाहि विश्वतः ॥२,७.३॥

द्युलोक से मूल भाग के रूप में आने वाली तथा धरती के ऊपर फैली हुई उस हजार गाँठों वाली वनस्पति दूबों से हे मणे ! आप हमारी सब प्रकार से सुरक्षा करें ॥२,७.३॥

परि मां परि मे प्रजां परि णः पाहि यद्धनम् ।
अरातिर्नो मा तारीन् मा नस्तारिशुरभिमातयः ॥२,७.४॥

हे मणे ! आप हमारी, हमारे पुत्र-पौत्रों तथा हमारे ऐश्वर्य की सुरक्षा करें। हमारा शत्रु वैभवहीन हो तथा हिंसक यक्ष पिशाच आदि हमारा विनाश करने में सक्षम न हों ॥२,७.४॥

शप्तारमेतु शपथो यः सुहार्त्तेन नः सह ।
चक्षुर्मन्त्रस्य दुर्हार्दः पृष्टीरपि शृणीमसि ॥२,७.५॥

शाप देने वाले व्यक्ति के पास ही शाप लौट जाए। जो श्रेष्ठ अन्त:करण वाले मनुष्य हैं, उनके साथ हमारी मित्रता स्थापित हो हे मणे ! हमारी बुराई करने वाले के नेत्र और पसलियों को छिन्न-भिन्न कर डालें ॥२,७.५॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त ८- क्षेत्रियरोगनाशन सूक्त

यक्ष्मा और कुष्ठ रोगों से मुक्त करने वाले तारे

उदगातां भगवती विचृतौ नाम तारके ।
वि क्षेत्रियस्य मुञ्चतामधमं पाशमुत्तमम् ॥२,८.१॥

विचृत नामक मूल नक्षत्र अथवा उपयुक्त औषधि का उदय हो गया। यह वंशानुगत रोग के अधम एवं उत्तम पाश को खोल दें ॥२,८.१॥

अपेयं रात्र्युछत्वपोछन्त्वभिकृत्वरीः ।
वीरुत्क्षेत्रियनाशन्यप क्षेत्रियमुछतु ॥२,८.२॥

यह रात्रि चली जाए, हिंसक रोगाणु भी चले जाएँ ।वंशानुगत रोग की औषधि उस रोग से मुक्ति प्रदान करे ॥२,८.२॥

बभ्रोरर्जुनकाण्डस्य यवस्य ते पलाल्या तिलस्य तिलपिञ्ज्या ।
वीरुत्क्षेत्रियनाशन्यप क्षेत्रियमुछतु ॥२,८.३॥

भूरे और सफेद रंग वाले अर्जुन की लकड़ी, जौ की बाल तथा तिल सहित तिल की मञ्जरी व्याधि को बिनष्ट करे। आनुवंशिक रोग को विनष्ट करने वाली यह वनस्पति इस रोग से विमुक्त करे ॥२,८.३॥

नमस्ते लाङ्गलेभ्यो नम ईषायुगेभ्यः ।
वीरुत्क्षेत्रियनाशन्यप क्षेत्रियमुछतु ॥२,८.४॥

रोग के शमन के लिए वृषभ युक्त हल तथा उसके काष्ठ युक्त अवयवों को नमन है । आनुवंशिक रोग को विनष्ट करने वाली औषधि आपके क्षेत्रिय रोग को विनष्ट करे ॥२,८.४॥

नमः सनिस्रसाक्षेभ्यो नमः संदेश्येभ्यः ।
नमः क्षेत्रस्य पतयह वीरुत्क्षेत्रियनाशन्यप क्षेत्रियमुछतु ॥२,८.५॥

औषधि उत्पादन में सहयोगी जल प्रवाहक अक्ष को नमन, संदेश पहुँचाने वाले को नमन, उत्पादक क्षेत्र के स्वामी को नमन । क्षेत्रिय रोग निवारक औषधि इस रोग का निवारण करे ॥२,८.५॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त ९- दीर्घायुप्राप्ति सूक्त

वनस्पतियों से निर्मित मणि का वर्णन

दशवृक्ष मुञ्चेमं रक्षसो ग्राह्या अधि यैनं जग्राह पर्वसु ।
अथो एनं वनस्पते जीवानां लोकमुन् नय ॥२,९.१॥

हे दशवृक्ष ! राक्षसी की तरह इस रोगी को जकड़ने वाले गठिया रोग से आप मुक्त करें । हे वनौषधे ! व्याधि के कारण निष्क्रिय इस व्यक्ति को पुनः जनसमाज में जाने योग्य बनाएँ ॥२,९.१॥

आगादुदगादयं जीवानां व्रातमप्यगात्।
अभूदु पुत्राणां पिता नृणां च भगवत्तमः ॥२,९.२॥

हे वनस्पते ! आपकी कृपा से यह व्यक्ति जीवन पाकर जीवित मनुष्यों के समूह में पुन: आ जाए और अपने पुत्रों

का पिता हो जाए तथा मनुष्यों के बीच में अत्यधिक सौभाग्यवान् बन जाए ॥२,९.२॥

अधीतीरध्यगादयमधि जीवपुरा अगान् ।
शतं ह्यस्य भिषजः सहस्रमुत वीरुधः ॥२,९.३॥

व्याधि से मुक्त हुए व्यक्ति को विद्याओं का स्मरण हो जाए तथा मनुष्यों के निवास स्थान को फिर से जान जाए, क्योंकि इस रोग के सैकड़ों वैद्य हैं तथा हजारों औषधियाँ हैं ॥२,९.३॥

देवास्ते चीतिमविदन् ब्रह्माण उत वीरुधः ।
चीतिं ते विश्वे देवा अविदन् भूम्यामधि ॥२,९.४॥

हे औषधे ! व्याधि की पीड़ा से रोगी को मुक्त करने तथा रोग का प्रतिरोध करने आदि आपके बल को समस्त देव जानते हैं। इस प्रकार पृथ्वी के ऊपर आपके गुण – धर्म को देव, ब्राह्मण तथा चिकित्सक जानते हैं ॥२,९.४॥

यश्चकार स निष्करत्स एव सुभिषक्तमः ।
स एव तुभ्यं भेषजानि कृणवद्भिषजा शुचिः ॥२,९.५॥

जो वैद्य अनवरत चिकित्सा का कार्य करते हैं, वही कुशलता प्राप्त करते हैं और वही श्रेष्ठ वैद्य बनते हैं। वही चिकित्सक अन्य चिकित्सकों से परामर्श करके आपके रोगों की चिकित्सा कर सकते हैं ॥२,९.५॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त १०- पाशमोचन सूक्त

द्यावा और पृथ्वी का विभिन्न रोगों में कल्याणकारी होना

क्षेत्रियात्त्वा निऋत्या जामिशंसाद्द्रुहो मुञ्चामि वरुणस्य पाशात्।
अनागसं ब्रह्मणा त्वा कृणोमि शिवे ते द्यावापृथिवी उभे स्ताम् ॥२,१०.१॥

हे पुरुष ! हम तुम्हें पैतृक रोग से, कष्टों से, द्रोह से, सम्बन्धियों के क्रोध से तथा वरुणदेव के पाश से मुक्त करते हैं। हम तुम्हें ब्रह्मज्ञान से दोषरहित करते हैं और यह द्यावा-पृथिवी भी तुम्हारे लिए कल्याण कारी हो ॥२,१०.१॥

शं ते अग्निः सहाद्भिरस्तु शं सोमः सहौषधीभिः ।
एवाहं त्वां क्षेत्रियान् निर्ऋत्या जामिशंसाद्द्रुहो मुञ्चामि वरुणस्य पाशात्।

अनागसं ब्रह्मणा त्वा कृणोमि शिवे ते द्यावापृथिवी उभे स्ताम् ॥२,१०.२॥

हे रोगिन् ! समस्त जल के साथ अग्निदेव आपके लिए हितकारी हों तथा कबीला आदि औषधियों के साथ सोमरस भी आपके लिए हर्षकारी हो । हम आपको क्षेत्रिय रोग से, पीड़ा से, द्रोह से, बन्धुओं के क्रोध से तथा वरुणदेव के पाश से मुक्त करके, ब्रह्मज्ञान के द्वारा दोषरहित करते हैं। यह द्यावा-पृथिवीं भीआपके लिए कल्याणकारी हो ॥२,१०.२॥

शं ते वातो अन्तरिक्षे वयो धाच्छं ते भवन्तु प्रदिशश्चतस्रः ।
एवाहं त्वां क्षेत्रियान् निर्ऋत्या जामिशंसाद्द्रुहो मुञ्चामि वरुणस्य पाशात्।
अनागसं ब्रह्मणा त्वा कृणोमि शिवे ते द्यावापृथिवी उभे स्ताम् ॥२,१०.३॥

हे रोगिन् ! अन्तरिक्ष में विचरण करने वाले वायुदेव आपके लिए सामर्थ्य एवं कल्याण प्रदान करें तथा चारों दिशाएँ

आपके लिए हितकारी हों । हम आपको आनुवंशिक रोग, द्रोह, पीड़ा, बन्धुओं के क्रोध तथा वरुणदेव के पाश से मुक्त करके, ब्रह्मज्ञान के द्वारा दोषरहित करते हैं । यह द्यावा-पृथिवीं भी आपके लिए कल्याणकारी हो ॥२,१०.३॥

इमा या देवीः प्रदिशश्चतस्रो वातपत्नीरभि सूर्यो विचष्टे ।
एवाहं त्वां क्षेत्रियान् निर्ऋत्या जामिशंसाद्द्रुहो मुञ्चामि वरुणस्य पाशात्।
अनागसं ब्रह्मणा त्वा कृनोमि शिवे ते द्यावापृथिवी उभे स्ताम् ॥२,१०.४॥

प्रकाशमयी चारों उपदिशाएँ वायुदेव की पत्नियाँ हैं, उनको आदित्यदेव चारों तरफ से देखते हैं । वह आपका कल्याण करें । हे रोगिन् ! हम भी आपको आनुवंशिक रोगों, द्रोह, बन्धुओं के क्रोध तथा वरुणदेव के पाश से मुक्त करके, ब्रह्मज्ञान के द्वारा दोषरहित करते हैं । यह द्यावा-पृथिवी भी आपके लिए कल्याणकारी हो ॥२,१०.४॥

तासु त्वान्तर्जरस्या दधामि प्र यक्ष्म एतु निर्ऋतिः पराचैः ।

एवाहं त्वां क्षेत्रियान् निर्ऋत्या जामिशंसाद्द्रुहो मुञ्चामि वरुणस्य पाशात्।
अनागसं ब्रह्मणा त्वा कृणोमि शिवे ते द्यावापृथिवी उभे स्ताम् ॥२,१०.५॥

हे रोगिन् ! हम आपको व्याधिरहित करके वृद्धावस्था तक जीवित रहने के लिए उन दिशाओं में स्थापित करते हैं। आपके समीप से क्षय रोग तथा सम्पूर्ण कष्ट अधोमुखी होकर दूर चले जाएँ। हे रोगिन् ! हम आपको आनुवंशिक रोग, पीड़ा, द्रोह, बन्धुओं के क्रोध तथा वरुणदेव के पाश से मुक्त करके, ब्रह्मज्ञान के द्वारा दोषरहित करते हैं । यह द्यावा-पृथिवी भी आपके लिए कल्याणकारी हो ॥२,१०.५॥

अमुक्था यक्ष्माद्दुरितादवद्याद्द्रुहः पाशाद्ब्राह्याश्चोदमुक्थाः ।
एवाहं त्वां क्षेत्रियान् निर्ऋत्या जामिशंसाद्द्रुहो मुञ्चामि वरुणस्य पाशात्।
अनागसं ब्रह्मणा त्वा कृणोमि शिवे ते द्यावापृथिवी उभे स्ताम् ॥२,१०.६॥

हे रोगिन् ! क्षय रोग, रोग के पाप, निन्दा योग्य कर्म, विद्रोह के बन्धन तथा जकड़ने वाले वात रोग से आप छुटकारा पा रहे हैं, अर्थात् निश्चित रूप से मुक्त हो रहे हैं । हम भी आपको पैतृक रोग की पीड़ा, द्रोह, बन्धुओं के क्रोध तथा वरुणदेव के पाश से मुक्त करके, ब्रह्मज्ञान के द्वारा दोषरहित करते हैं। यह द्यावा-पृथिवी भी आपके लिए कल्याणकारी हो ॥२,१०.६॥

अहा अरातिमविदः स्योनमप्यभूर्भद्रे सुकृतस्य लोके ।
एवाहं त्वां क्षेत्रियान् निर्ऋत्या जामिशंसाद्द्रुहो मुञ्चामि वरुणस्य पाशात्।
अनागसं ब्रह्मणा त्वा कृणोमि शिवे ते द्यावापृथिवी उभे स्ताम् ॥२,१०.७॥

हे व्याधिग्रस्त मानव ! आप शत्रु समान बाधक रोम से मुक्त हों और अब आप हर्ष को प्राप्त करें। आप अपने पुण्य के परिणाम स्वरूप इस कल्याणमय लोक में पधारे हैं। हम भी आपको आनुवंशिक रोग की पीड़ा, द्रोह, बन्धुओं के आक्रोश तथा वरुणदेव के पाश से मुक्त करके, ब्रह्मज्ञान

के द्वारा दोषरहित करते हैं। यह द्यावा-पृथिवी भी आपके लिए कल्याणकारी हो ॥२,१०.७॥

सूर्यमृतं तमसो ग्राह्या अधि देवा मुञ्चन्तो असृजन् निरेनसः।
एवाहं त्वां क्षेत्रियान् निर्ऋत्या जामिशंसाद्द्रुहो मुञ्चामि वरुणस्य पाशात्।
अनागसं ब्रह्मणा त्वा कृणोमि शिवे ते द्यावापृथिवी उभे स्ताम् ॥२,१०.८॥

जिस प्रकार देवताओं ने सत्य रूप सूर्य को राहु नामक ग्रह से मुक्त किया था, उसी प्रकार हम आपको पैतृक रोग की पीड़ा, द्रोह के पाप, बन्धुओं के आक्रोश तथा वरुणदेव के पाश से मुक्त करके, ब्रह्मज्ञान के द्वारा दोषरहित करते हैं । यह द्यावा-पृथिवी भी आपके लिए कल्याणकारी हो ॥२,१०.८॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त ११- श्रेय: प्राप्ति सूक्त

तिलक वक्ष से निर्मित मणि

दूष्या दूषिरसि हेत्या हेतिरसि मेन्या मेनिरसि ।
आप्नुहि श्रेयांसमति समं क्राम ॥२,११.१॥

हे तिलकमणे ! आप दोषों को भी दूषित करने में समर्थ हैं। अनिष्टकारी हथियारों के लिए, आप विनाशक हथियार हैं आप वज्र के भी वज्र हैं, इसलिए आप श्रेयस्कर बनें और शत्रुओं की समानता के आगे अधिक समर्थ सिद्ध हों ॥२,११.१॥

स्रक्त्योऽसि प्रतिसरोऽसि प्रत्यभिचरणोऽसि ।
आप्नुहि श्रेयांसमति समं क्राम ॥२,११.२॥

आप स्वक्त्य अर्थात तिलकवृक्ष से उत्पन्न या गतिशील हैं, प्रतिसर अर्थात आघात को उलट देने में समर्थ हैं, प्रत्याक्रमण करने में समर्थ हैं । अत: आप श्रेयस्कर बनें और शत्रुओं की समानता के आगे अधिक समर्थ सिद्ध हों॥२,११.२॥

प्रति तमभि चर योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ।
आप्नुहि श्रेयांसमति समं क्राम ॥२,११.३॥

जो शत्रु हमसे द्वेष करते हैं , हमारे विकास में बाधक बनते हैं तथा जिनसे हम द्वेष करते उनका निवारण चाहते हैं, उन पर आप प्रत्याक्रमण करें । इस प्रकार आप श्रेयस्कर बनें, शत्रुओं से अधिक समर्थ बनें ॥२,११.३॥

सूरिरसि वर्चोधा असि तनूपानोऽसि ।
आप्नुहि श्रेयांसमति समं क्राम ॥२,११.४॥

आप आवश्यकता के अनुरूप ज्ञान-सम्पन्न हैं, तेजस्विता को धारण करने में समर्थ हैं तथा शरीर के रक्षक हैं, अत: आप श्रेयस्कर सिद्ध हों, शत्रुओं की समानता से आगे बढ़े ॥२,११.४॥

शुक्रोऽसि भ्राजोऽसि स्वरसि ज्योतिरसि ।
आप्नुहि श्रेयांसमति समं क्राम ॥२,११.५॥

आप शुक्र अर्थात उज्ज्वल अथवा वीर्यवान् हैं, तेजस्वी हैं, आत्मसत्ता सम्पन्न हैं तथा ज्योति रूप स्व प्रकाशित हैं । आप श्रेयस्कर बने तथा समान स्तर वालों से आगे बढ़े ॥२,११.५॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त १२- शत्रुनाशन सूक्त

द्यावा, पृथ्वी और अंतरिक्ष के अधिपति देव क्रमशः अग्नि, वायु और सूर्य का वर्णन

द्यावापृथिवी उर्वन्तरिक्षं क्षेत्रस्य पत्न्युरुगायोऽद्भुतः ।
उतान्तरिक्षमुरु वातगोपं त इह तप्यन्तां मयि तप्यमाने ॥२,१२.१॥

द्यावा-पृथिवी, विस्तृत अन्तरिक्ष, प्रकृति, अद्भुत सूर्यदेव, वायु को स्थान देने वाला विशाल अन्तरिक्ष आदि, हमारे संतप्त होने पर यह सब भी संतप्त होकर शत्रुओं का विनाश करें ॥२,१२.१॥

इदं देवाः शृणुत यह यज्ञिया स्थ भरद्वाजो मह्यमुक्थानि शंसति ।

पाशे स बद्धो दुरिते नि युज्यतां यो अस्माकं मन इदं हिनस्ति ॥२,१२.२॥

हे यजनीय देवो ! आप हमारा निवेदन सुनें कि ऋषि भरद्वाज हमें मंत्रादि प्रदान कर रहे हैं । सत्कर्मों में निमग्न हमारे मन को जो शत्रु दुःखी करते हैं, उन पापों को पाश में बाँधकर उचित स्थान पर नियोजित करें ॥२,१२.२॥

इदमिन्द्र शृणुहि सोमप यत्त्वा हृदा शोचता जोहवीमि ।
वृश्चामि तं कुलिशेनेव वृक्षं यो अस्माकं मन इदं हिनस्ति ॥२,१२.३॥

हे इन्द्रदेव ! आप सोमरस पान द्वारा आनन्दित मन से हमारी प्रार्थनाओं को सुनें । शत्रुओं द्वारा किए गए दुष्कर्मों के कारण हम आपको बारम्बार पुकारते हैं । जो शत्रु हमारे मन को पीड़ा पहुँचाते हैं, हम उनको फरसे के द्वारा वृक्ष की तरह काटते हैं ॥२,१२.३॥

अशीतिभिस्तिसृभिः सामगेभिरादित्येभिर्वसुभिरङ्गिरोभिः ।
इष्टापूर्तमवतु नः पितॄणामामुं ददे हरसा दैव्येन ॥२,१२.४॥

तीन छन्दों एवं अस्सी मंत्रों सहित सामगान करने वालों के साथ, वसु, अंगिरा एवं आदित्यों सहित हमारे पितरों द्वारा किए गए इष्ट -यज्ञ-उपासनादि तथा पूर्त-सेवा-सहयोगपरक कर्म से प्रकट पुण्य हमारी रक्षा करें । हम दिव्य सामर्थ्य एवं आक्रोशपूर्वक अमुक दोष अथवा शत्रु को अपने अधिकार में लेते हैं ॥२,१२.४॥

द्यावापृथिवी अनु मा दीधीथां विश्वे देवासो अनु मा रभध्वम्।
अङ्गिरसः पितरः सोम्यासः पापमा ऋछत्वपकामस्य कर्ता
॥२,१२.५॥

हे द्यावा-पृथिवि ! हमारे अनुकूल होकर आप तेजस्-सम्पन्न बनें । हे समस्त देवताओ ! हमारे अनुकूल होकर आप कार्यारंभ करें । हे अङ्गिराओ तथा सोमवान् पितरो ! हमारा अहित चाहने वाले पाप के भागीदार हों ॥२,१२.५॥

अतीव यो मरुतो मन्यते नो ब्रह्म वा यो निन्दिषत्क्रियमाणम्।
तपूंषि तस्मै वृजिनानि सन्तु ब्रह्मद्विषं द्यौरभिसंतपाति
॥२,१२.६॥

हे मरुद्गणो ! जो अतिवादी ब्रह्म-ज्ञान की तथा तदनुरूप किए जाने वाले कर्मों की निन्दा करते हैं, उनके सब प्रयास उन्हें संताप देने वाले हों । द्युलोक उन ब्रह्मद्वेषियों को पीड़ित करे ॥२,१२.६॥

सप्त प्राणान् अष्टौ मन्यस्तांस्ते वृश्चामि ब्रह्मणा ।
अया यमस्य सादनमग्निदूतो अरंकृतः ॥२,१२.७॥

हे रोग या शत्रु ! तुम्हारे सात प्राणों तथा आठ मुख्य नाड़ियों आदि को हम ब्रह्म शक्ति से बाँधते हैं। तुम अग्नि को दूत बनाकर यमराज के घर में सुशोभित हो जाओ ॥२,१२.७॥

आ दधामि ते पदं समिद्धे जातवेदसि ।
अग्निः शरीरं वेवेष्ट्वसुं वागपि गछतु ॥२,१२.८॥

हम तुम्हारे पदों को प्रज्वलित अग्नि में डालते हैं। यह अग्नि आपके शरीर में प्रवेश कर जाए तथा आपको वाणी और प्राण में संव्याप्त हो जाए ॥२,१२.८॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त १३- दीर्घायुप्राप्ति सूक्त

अग्नि, बृहस्पति और विश्वे देव का गुणगान

आयुर्दा अग्ने जरसं वृणानो घृतप्रतीको घृतपृष्ठो अग्ने ।
घृतं पीत्वा मधु चारु गव्यं पितेव पुत्रान् अभि रक्षतादिमम्
॥२,१३.१॥

हे तेजस्वी अग्निदेव ! आप शतायु जीवन प्रदान करने वाले तथा घृत के समान ओजस्वी तथा घृत का सेवन करने वाले हैं । आप मधुर गव्य गौ या प्रकृति जन्य पदार्थों का सेवन करके इम बालक या प्राणी की सब प्रकार से उसी प्रकार रक्षा करें, जैसे पिता, पुत्र की रक्षा करना हैं ॥२,१३.१॥

परि धत्त धत्त नो वर्चसेमं जरामृत्युं कृणुत दीर्घमायुः ।
बृहस्पतिः प्रायछद्वास एतत्सोमाय राज्ञे परिधातवा उ
॥२,१३.२॥

हे देवो ! आप इस जीव को काया रूप वस्त्र प्रदान करें तथा तेजस्विता धारण कराएँ। आप दीर्घ आयु प्रदान करें, वृद्धावस्था के उपरान्त मरने वाला वनाएँ । वृहस्पतिदेव ने यह आच्छादन राजा सोम को कृपापूर्वक प्रदान किया ॥२,१३.२॥

परीदं वासो अधिथाः स्वस्तयहऽभूर्गृष्टीनामभिशस्तिपा उ ।
शतं च जीव शरदः पुरूची रायश्च पोषमुपसंव्ययस्व ॥२,१३.३॥

हे जीव ! इस वस्त्र को तुम अपने कल्याण के लिए धारण करो। तुम गौ रुपी इन्द्रियों को विनाश से बचाने के लिए ही हो । तुम सौ वर्ष की दीर्घ आयु प्राप्त करें और ऐश्वर्य तथा पोषण का ताना-बाना बुनते रहो ॥२,१३.३॥

एह्यश्मानमा तिष्ठाश्मा भवतु ते तनूः ।
कृण्वन्तु विश्वे देवा आयुष्टे शरदः शतम् ॥२,१३.४॥

हे साधक ! आओ इस साधनापरक दृढ़ आधार रुपी पत्थर पर स्थित हो जाओ, ताकि तुम्हारी काया पत्थर के समान दृढ़ बने । देव शक्तियाँ तुम्हारी आयु को सौ वर्ष की करें ॥२,१३.४॥

यस्य ते वासः प्रथमवास्यं हरामस्तं त्वा विश्वेऽवन्तु देवाः ।
तं त्वा भ्रातरः सुवृधा वर्धमानमनु जायन्तां बहवः सुजातम्
॥२,१३.५॥

हे जीव ! तुम्हारे जिस अस्तित्व के लिए यह प्रथम आच्छादन प्रदान किया गया है, उसकी रक्षा सभी देवता करें । इसी प्रकार श्रेष्ठ जन्म वाले, सुवर्धित तथा विकासमान होकर तुम्हारे सुन्दर भाई उत्पन्न हों ॥२,१३.५॥

॥अथर्ववेद - प्रथमं काण्डम्॥

सूक्त १४- दस्युनाशन सूक्त

अग्नि, भूतपति तथा इंद्र की स्तुति

निःसालां धृष्णुं धिषणमेकवाद्यां जिघत्स्वम् ।
सर्वाश्चण्डस्य नप्त्यो नाशयामः सदान्वाः ॥२,१४.१॥

निःसाला-निष्कासित करने वाली, धृष्णु-भयानक, धिषण-अभिभूत करने वाली, एकवाद्या-भयानक, हठपूर्ण एक ही स्वर से बोलने वाली, खा जाने वाली तथा सदा चीखने वाली, चण्ड़ की संतानों को हम दूर भगाते हैं॥२,१४.१॥

निर्वो गोष्ठादजामसि निरक्षान् निरुपानशात्।
निर्वो मगुन्द्या दुहितरो गृहेभ्यश्चातयामहे ॥२,१४.२॥

हे मगुन्दी-पाप उत्पन्न करने वाली, राक्षसी की पुत्रियो ! हम तुम्हें अपने गौओं की गोशालाओं से निकालते हैं । हम तुम्हें अन्नादि से पूर्ण भवनों, गाड़ियों से बाहर निकालकर नष्ट करते हैं ॥२,१४.२॥

असौ यो अधराद्गृहस्तत्र सन्त्वराय्यः ।
तत्र सेदिर्न्युच्यतु सर्वाश्च यातुधान्यः ॥२,१४.३॥

दूर भगाने के बाद अरण्यि-दरिद्रता या विपत्ति जन्य तथा सेदि-क्लेश-महामारी उत्पादक संबोधन वाली आसुरी शक्तियाँ जो नीचे वाले गृह- अधोलोक हैं, वहीं जाएँ, वहीं रहें ॥२,१४.३॥

भूतपतिर्निरजत्विन्द्रश्चेतः सदान्वाः ।
गृहस्य बुध्न आसीनास्ता इन्द्रो वज्रेणाधि तिष्ठतु ॥२,१४.४॥

प्राणियों के पालक तथा सोमपायी इन्द्रदेव, सदैव क्रोध करने वाली इन पिशाचियों को हमारे घर से बाहर करें तथा अपने वज्र से इन्हें नष्ट करें ॥२,१४.४॥

यदि स्थ क्षेत्रियाणां यदि वा पुरुषेषिताः ।
यदि स्थ दस्युभ्यो जाता नश्यतेतः सदान्वाः ॥२,१४.५॥

हे राक्षसियो ! तुम कुष्ठ, संग्रहणी आदि आनुवंशिक रोगों की मूल कारण हो । तुम शत्रुओं द्वारा प्रेरित हो और क्षति पहुँचाने वाले चोरों के समीप पैदा हुई हो । अत: तुम हमारे घर से बाहर जाकर नष्ट हो जाओ ॥२,१४.५॥

परि धामान्यासामाशुर्गाष्ठामिवासरम् ।
अजैषं सर्वान् आजीन् वो नश्यतेतः सदान्वाः ॥२,१४.६॥

जिस प्रकार द्रुतगामी घोड़े अपने लक्ष्य पर आक्रमण करके खड़े हो जाते हैं, उसी प्रकार इन राक्षसियों के घरों पर हम आक्रमण कर चुके हैं। हे पिशाचियो ! तुम सब युद्ध में परास्त हो गईं और हमने तुम्हारे निवास स्थान पर नियन्त्रण कर लिया है। अतः तुम सब निराश्रित होकर नष्ट हो जाओ ॥२,१४.६॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त १५- अभयप्राप्ति सूक्त

प्राणों को बल प्राप्ति की कामना

यथा द्यौश्च पृथिवी च न बिभीतो न रिष्यतः ।
एवा मे प्राण मा बिभेः ॥२,१५.१॥

जिस प्रकार द्युलोक एवं पृथ्वी लोक न भयभीत होते हैं और न नष्ट होते हैं, उसी प्रकार हे मेरे प्राण ! तुम भी नष्ट होने का भय मत करो ॥२,१५.१॥

यथाहश्च रात्री च न बिभीतो न रिष्यतः ।
एवा मे प्राण मा बिभेः ॥२,१५.२॥

रात्रि और दिन न डरते हैं, न ही विनष्ट होते हैं । हे मेरे प्राण ! तुम भी (नष्ट होने का भय मत करो ॥२,१५.२॥

यथा सूर्यश्च चन्द्रश्च न बिभीतो न रिष्यतः ।

एवा मे प्राण मा बिभेः ॥२,१५.३॥

जैसे सूर्य और चन्द्रमा न डरते हैं, न हीं विनष्ट होते हैं, उसी प्रकार हे मेरे प्राण ! तुम भी विनाश से मत डरो ॥२,१५.३॥

यथा ब्रह्म च क्षत्रं च न बिभीतो न रिष्यतः ।
एवा मे प्राण मा बिभेः ॥२,१५.४॥

जिस प्रकार ब्राह्मण और क्षत्रिय न डरते हैं, न ही विनष्ट होते हैं, उसी प्रकार हे मेरे प्राण ! तुम भी विनाश का भय मत करो ॥२,१५.४॥

यथा सत्यं चानृतं च न बिभीतो न रिष्यतः ।
एवा मे प्राण मा बिभेः ॥२,१५.५॥

जिस प्रकार सत्य और असत्य न किसी से भयभीत होते हैं, न ही विनष्ट होते हैं, उसी प्रकार हे मेरे प्राण ! तुम भी मृत्यु भय से मुक्त होकर रहो ॥२,१५.५॥

यथा भूतं च भव्यं च न बिभीतो न रिष्यतः ।
एवा मे प्राण मा बिभेः ॥२,१५.६॥

जिस प्रकार भूत और भविष्य न किसी से भयभीत होते हैं, न ही विनष्ट होते हैं, उसी प्रकार हे मेरे प्राण ! तुम भी मृत्यु भय से मुक्त होकर रहो ॥२,१५.६॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त १६- सुरक्षा सूक्त

प्राण और अपान से होने वाली मृत्यु से रक्षा के लिए प्रार्थना

प्राणापानौ मृत्योर्मा पातं स्वाहा ॥२,१६.१॥

हे प्राण और अपान ! आप दोनों मृत्यु से हमारी सुरक्षा करें और हमारी आहुति स्वीकार करें ॥२,१६.१॥

द्यावापृथिवी उपश्रुत्या मा पातं स्वाहा ॥२,१६.२॥

हे द्यावा-पृथिवि ! आप दोनों सुनने की शक्ति प्रदान करके हमारी सुरक्षा करें तथा आहुति ग्रहण करें ॥२,१६.२॥

सूर्य चक्षुषा मा पाहि स्वाहा ॥२,१६.३॥

हे सूर्यदेव ! आप हमें देखने की शक्ति प्रदान करके हमारी सुरक्षा करें और हमारी आहुति ग्रहण करें ॥२,१६.३॥

अग्ने वैश्वानर विश्वैर्मा देवैः पाहि स्वाहा ॥२,१६.४॥

हे वैश्वानर अग्निदेव ! आप समस्त देवताओं के साथ हमारी सुरक्षा करें और हमारी आहुति ग्रहण करें ॥२,१६.४॥

विश्वम्भर विश्वेन मा भरसा पाहि स्वाहा ॥२,१६.५॥

हे समस्त प्राणियों का पोषण करने वाले विश्वम्भर अग्ने ! आप अपनी समस्त पोषण-शक्ति से हमारी सुरक्षा करें तथा हमारी आहुति ग्रहण करें ॥२,१६.५॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त १७- बलप्राप्ति सूक्त

अग्नि की ओज के रूप में स्तुति

ओजोऽस्योजो मे दाः स्वाहा ।२,१७.१॥

हे अग्निदेव ! आप ओजस्वी हैं। अत: हमें ओज प्रदान करें; हम आपको आहुति प्रदान करते हैं ॥२,१७.१॥

सहोऽसि सहो मे दाः स्वाहा ॥२,१७.२॥

हे अग्निदेव ! आप शौर्यवान् हैं. इसलिए हमें शौर्य प्रदान करें, हम आपको हवि प्रदान करते हैं ॥२,१७.२॥

बलमसि बलं दाः स्वाहा ॥२,१७.३॥

हे अग्निदेव ! आप बल से सम्पन्न हैं. अतः हमें बल प्रदान करें, हम आपको हवि प्रदान करते हैं ॥२,१७.३॥

आयुरस्यायुर्मे दाः स्वाह ॥२,१७.४॥

हे अग्ने !आप जीवनशक्ति-सम्पन्न हैं ।अत:हमें वह शक्ति प्रदान करें; हम आपको हवि प्रदान करते हैं ॥२,१७.४॥

श्रोत्रमसि श्रोत्रं मे दाः स्वाह ॥२,१७.५॥

हे अग्ने !आप श्रवणशक्तिसम्पन्न हैं ।अतः हमें वह शक्ति प्रदान करें; हम आपको हवि प्रदान करते हैं ॥२,१७.५॥

चक्षुरसि चक्षुर्मे दाः स्वाह ॥२,१७.६॥

हे अग्ने !आप दर्शनशक्ति-सम्पन्न हैं ।अतः हमें वह शक्ति प्रदान करें, हम आपको हवि प्रदान करते हैं २,१७.॥६॥

परिपाणमसि परिपाणं मे दाः स्वाह ॥२,१७.७॥

हे अग्निदेव ! आप परिपालन की शक्ति से सम्पन्न हैं । अतः आप हमें पालन करने की शक्ति प्रदान करें, हम आपको हवि प्रदान करते हैं ॥२,१७.७॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त १८- शत्रुनाशन सूक्त

अग्नि देव से शक्ति प्रदान करने की प्रार्थना

भ्रातृव्यक्षयणमसि भ्रातृव्यचातनं मे दाः स्वाह ॥२,१८.१॥

हे अग्निदेव ! आप शत्रुओं का नाश करने की शक्ति से सम्पन्न हैं। अत: आप हमें शत्रु नाशक शक्ति प्रदान करें, हम आपको आहुति प्रदान करते हैं ॥२,१८.१॥

सपत्नक्षयणमसि सपत्नचातनं मे दाः स्वाह ॥२,१८.२॥

हे अग्निदेव ! आप प्रत्यक्ष प्रतिद्वंद्वियों का विनाश करने वाली शक्ति से सम्पन्न हैं। अत: आप हमें वह शक्ति प्रदान करें, हम आपको हवि प्रदान करते हैं ॥२,१८.२॥

अरायक्षयणमस्यरायचातनं मे दाः स्वाह ॥२,१८.३॥

हे अग्निदेव ! आप निर्धनता का विनाश करने वाले हैं। आप हमें दरिद्रता विनाशक शक्ति प्रदान करें; हम आपको हवि प्रदान करते हैं ॥२,१८.३॥

पिशाचक्षयणमसि पिशाचचातनं मे दाः स्वाह ॥२,१८.४॥

हे अग्निदेव ! आप पिशाचों का विनाश करने वाले हैं। अतः आप हमें पिशाचनाशक शक्ति प्रदान करें; हम आपको हवि प्रदान करते हैं ॥२,१८.४॥

सदान्वाक्षयणमसि सदान्वाचातनं मे दाः स्वाह ॥२,१८.५॥

हे अग्निदेव ! आप आसुरी वृत्तियों को दूर करने की शक्ति से सम्पन्न हैं। अत: आप हमें वह शक्ति प्रदान करें; हम आपको हवि प्रदान करते हैं ॥२,१८.५॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त १९- शत्रुनाशन सूक्त

अग्नि देव की स्तुति

अग्ने यत्ते तपस्तेन तं प्रति तप योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥२,१९.१॥

हे अग्निदेव ! आपके अन्दर जो ताप है, उस शक्ति के द्वारा आप शत्रुओं को तप्त करें । जो शत्रु हमसे विद्वेष करते हैं तथा जिससे हम विद्वेष करते हैं, उन शत्रुओं को आप संतप्त करें ॥२,१९.१॥

अग्ने यत्ते हरस्तेन तं प्रति हर योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥२,१९.२॥

हे अग्निदेव ! आपके अन्दर जो हरने की शक्ति विद्यमान है, उस शक्ति के द्वारा आप उन शत्रुओं की शक्ति का हरण

करें, जो हम से विद्वेष करते हैं तथा हम जिससे द्वेष करते हैं ॥२,१९.२॥

अग्ने यत्तेऽर्चिस्तेन तं प्रत्यर्च योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥२,१९.३॥

हे अग्निदेव ! आपके अन्दर जो दीप्ति हैं, उस शक्ति के द्वारा आप उन शत्रुओं को जला दें, जो हमसे विद्वेष करते हैं तथा जिनसे हम विद्वेष करते हैं ॥२,१९.३॥

अग्ने यत्ते शोचिस्तेन तं प्रति शोच योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥२,१९.४॥

हे अग्निदेव ! आपके अन्दर जो शोकाकुल करने की शक्ति है, उस शक्ति के द्वारा आप उन व्यक्तियों को शोकाकुल करें, जो हमसे शत्रुता करते हैं तथा जिनसे हम शत्रुता करते हैं ॥२,१९.४॥

अग्ने यत्ते तेजस्तेन तमतेजसं कृणु योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥२,१९.५॥

हे अग्निदेव ! आपके अन्दर जो पराभिभूत करने की शक्ति विद्यमान है, उस अभिभृत करने की तेजस्विनी के द्वारा आप उन मनुष्यों को निस्तेज करें, जो हमसे शत्रुता करते हैं तथा जिनसे हम शत्रुता करते हैं ॥२,१९.५॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त २०- शत्रुनाशन सूक्त

वायु देव की स्तुति

वायो यत्ते तपस्तेन तं प्रति तप योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥२,२०.१॥

हे वायुदेव ! आपके अन्दर जो ताप (प्रताप) हैं, उस शक्ति के द्वारा आप उन शत्रुओं को तप्त करें, जो हमसे विद्वेष करते हैं तथा जिनसे हम विद्वेष करते हैं ॥२,२०.१॥

वायो यत्ते हरस्तेन तं प्रति हर योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥२,२०.२॥

हे वायुदेव ! आपके अन्दर जो हरने की शक्ति हैं, उस शक्ति के द्वारा आप उन शत्रुओं की शक्ति का हरण करें,

जो हमसे शत्रुता करते हैं तथा जिनसे हम शत्रुता करते हैं ॥२,२०.२॥

वायो यत्तेऽर्चिस्तेन तं प्रत्यर्च योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥२,२०.३॥

हे वायुदेव ! आपके अन्दर जो प्रज्वलन शक्ति है, उस शक्ति के द्वारा आप उन शत्रुओं को जला दें, जो हमसे शत्रुता करते हैं तथा जिनसे हम शत्रुता करते हैं ॥२,२०.३॥

वायो यत्ते शोचिस्तेन तं प्रति शोच योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥२,२०.४॥

हे वायुदेव ! आपके अन्दर जो शोकाकुल करने की शक्ति हैं, उस शक्ति के द्वारा आप उन मनुष्यों को शोकाभिभूत करें, जो हमसे विद्वेष करते हैं तथा जिनसे हम विद्वेष करते हैं ॥२,२०.४॥

वायो यत्ते तेजस्तेन तमतेजसं कृणु योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥२,२०.५॥

हे वायुदेव ! आपके अन्दर जो पराभिभूत करने की शक्ति विद्यमान है, उस शक्ति के द्वारा आप उन शत्रुओं को तेजहीन करें, जो हमसे विद्वेष करते हैं तथा जिनसे हम विद्वेष करते हैं ॥२,२०.५॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त २१- शत्रुनाशन सूक्त

सूर्य देव की स्तुति

सूर्य यत्ते तपस्तेन तं प्रति तप योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥२,२१.१॥

हे सूर्यदेव ! आपके अन्दर जो संतप्त करने की शक्ति हैं, उस शक्ति के द्वारा आप उन शत्रुओं को संतप्त करें, जो हमसे शत्रुता करते हैं तथा जिनसे हम शत्रुता करते हैं ॥२,२१.१॥

सूर्य यत्ते हरस्तेन तं प्रति हर योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥२,२१.२॥

हे सूर्यदेव ! आपके अन्दर जो हरण करने की शक्ति है, उस शक्ति के द्वारा आप उन शत्रुओं की शक्ति का हरण

करें, जो हमसे द्वेष करते हैं तथा जिनसे हम द्वेष करते हैं ॥२,२१.२॥

सूर्य यत्तेऽर्चिस्तेन तं प्रत्यर्च योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥२,२१.३॥

हे सूर्यदेव ! आपके अन्दर जो प्रज्वलन शक्ति है , उस शक्ति के द्वारा आप उन शत्रुओं को जला दें, जो हमसे विद्वेष करते हैं तथा जिनसे हम विद्वेष करते हैं ॥२,२१.३॥

सूर्य यत्ते शोचिस्तेन तं प्रति शोच योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥२,२१.४॥

हे सूर्यदेव ! आपके अन्दर जो शोकाभिभूत करने की शक्ति हैं, उस शक्ति के द्वारा आप उन मनुष्यों को शोकाभिभूत करें, जो हमसे विद्वेष करते हैं तथा जिनसे हम विद्वेष करते हैं ॥२,२१.४॥

सूर्य यत्ते तेजस्तेन तमतेजसं कृणु योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥२,२१.५॥

हे सूर्यदेव ! आपके अन्दर जो पराभिभूत करने की शक्ति विद्यमान हैं, उसके द्वारा आप उन मनुष्यों को तेजविहीन करें, जो हमसे विद्वेष करते हैं तथा जिनसे हम विद्वेष करते हैं ॥२,२१.५॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त २२- शत्रुनाशन सूक्त

चंद्र देव की स्तुति

चन्द्र यत्ते तपस्तेन तं प्रति तप योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥२,२२.१॥

हे चन्द्रदेव ! आपके अन्दर जो तपाने की शक्ति है, उस शक्ति के द्वारा आप उन शत्रुओं को संतप्त करें, जो हमसे विद्वेष करते हैं तथा जिनसे हम विद्वेष करते हैं ॥२,२२.१॥

चन्द्र यत्ते हरस्तेन तं प्रति हर योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥२,२२.२॥

हे चन्द्रदेव ! आपके अन्दर जो हरण करने की शक्ति हैं, उस शक्ति के द्वारा आप उन शत्रुओं की शक्ति का हरण

करें, जो हमसे विद्वेष करते हैं तथा जिनसे हम विद्वेष करते हैं ॥२,२२.२॥

चन्द्र यत्तेऽर्चिस्तेन तं प्रत्यर्च योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥२,२२.३॥

हे चन्द्रदेव ! आपके अन्दर जो प्रज्वलन शक्ति है, उस शक्ति के द्वारा आप उन शत्रुओं को जला दें, जो हमसे विद्वेष करते हैं तथा जिनसे हम विद्वेष करते हैं ॥२,२२.३॥

चन्द्र यत्ते शोचिस्तेन तं प्रति शोच योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥२,२२.४॥

है चन्द्रदेव ! आपके अन्दर जो शोकाकुल करने की शक्ति है, उस शक्ति के द्वारा आप उन शत्रुओं को शोकाभिभूत करें, जो हमसे विद्वेष करते हैं तथा जिनसे हम विद्वेष करते हैं ॥२,२२.४॥

चन्द्र यत्ते तेजस्तेन तमतेजसं कृणु योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥२,२२.५॥

हे चन्द्रदेव ! आपके अन्दर जो पराभिभूत करने की शक्ति विद्यमान है, उस शक्ति के द्वारा आप उन शत्रुओं को तेजविहीन करें, जो हमसे शत्रुता करते हैं तथा जिनसे हम शत्रुता करते हैं । ॥२,२२.५॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त २३- शत्रुनाशन सूक्त

जल देव की स्तुति

आपो यद्वस्तपस्तेन तं प्रति तपत योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥२,२३.१॥

हे जलदेव ! आपके अन्दर जो ताप (प्रताप) है, उस शक्ति के द्वारा आप उन शत्रुओं को संतप्त करें, जो हमसे विद्वेष करते हैं तथा जिनसे हम विद्वेष करते हैं ॥२,२३.१॥

आपो यद्वस्हरस्तेन तं प्रति हरत योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥२,२३.२॥

हे जल देव ! आपके अन्दर जो हरण करने की शक्ति है, उस शक्ति के द्वारा आप उन शत्रुओं की शक्ति का हरण

करें, जो हमसे विद्वेष करते हैं तथा जिनसे हम विद्वेष करते हैं ॥२,२३.२॥

आपो यद्वस्ऽर्चिस्तेन तं प्रति अर्चत योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥२,२३.३॥

हे जलदेव ! आपके अन्दर जो प्रज्वलन शक्ति हैं, उस शक्ति के द्वारा आप उन शत्रुओं को जला दें, जो हमसे विद्वेष करते हैं तथा जिनसे हम विद्वेष करते हैं ॥२,२३.३॥

आपो यद्वस्शोचिस्तेन तं प्रति शोचत योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥२,२३.४॥

हे जलदेव ! आपके अन्दर जो शोकाकुल करने की शक्ति है, उस शक्ति के द्वारा आप उन मनुष्यों को शोकाकुल करें, जो हमसे विद्वेष करते हैं तथा जिनसे हम विद्वेष करते हैं ॥२,२३.४॥

आपो यद्वस्तेजस्तेन तमतेजसं कृणुत योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ॥२,२३.५॥

हे जलदेव ! आपके अन्दर जो पराभिभूत करने की शक्ति विद्यमान है, उसके द्वारा आप उन शत्रुओं को तेजविहीन करें, जो हमसे विद्वेष करते हैं तथा जिनसे हम विद्वेष करते हैं ॥२,२३.५॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त २४- शत्रुनाशन सूक्त

राक्षसों के स्वामी से अनुरोध

शेरभक शेरभ पुनर्वो यन्तु यातवः पुनर्हेतिः किमीदिनः ।
यस्य स्थ तमत्त यो वो प्राहैत्तमत्त स्वा मांसान्यत्त ॥२,२४.१॥

हे वधिको और लुटेरों ! हमारी ओर प्रेरित तुम्हारे प्रहार और यातनाएँ हमारे समीप से पुनः-पुनः वापस लौट जाएँ ।तुम अपने साथियों का ही भक्षण करो, जिन्होंने तुम्हें भेजा है, उनका भक्षण करो, तुम्हारे आयुध उन्ही के मांस का भक्षण करें ॥२,२४.१॥

शेवृधक शेवृध पुनर्वो यन्तु यातवः पुनर्हेतिः किमीदिनः ।
यस्य स्थ तमत्त यो वो प्राहैत्तमत्त स्वा मांसान्यत्त ॥२,२४.२॥

हे घात करने वाले शेवृधक अर्थात अपने आश्रितों को सुख देने वाले और उनके अनुचर लुटेरो ! हमारी तरफ प्रेरित तुम्हारे प्रहार एवं यातनाएँ, असुर तथा हथियार हमारे समीप से बार-बार वापस लौट जाएँ। तुम अपने साथियों का ही भक्षण करो, भेजने वालों का भक्षण करो, अपने ही मांस का भक्षण करो ॥२,२४.२॥

म्रोकानुम्रोक पुनर्वो यन्तु यातवः पुनर्हेतिः किमीदिनः ।
यस्य स्थ तमत्त यो वो प्राहैत्तमत्त स्वा मांसान्यत्त ॥२,२४.३॥

हे चोर तथा चोर के अनुचर लुटेरो ! हमारी तरफ प्रेरित की हुई तुम्हारी यातनाएँ, असुर तथा हथियार हमारे पास से पुनः-पुनः वापस चले जाएँ । तुम्हें जिस व्यक्ति ने हमारे समीप भेजा है या जो तुम्हारे साथ हैं, तुम उन्हीं का भक्षण करो, स्वयं अपने मांस का भक्षण करो ॥२,२४.३॥

सर्पानुसर्प पुनर्वो यन्तु यातवः पुनर्हेतिः किमीदिनः ।
यस्य स्थ तमत्त यो वो प्राहैत्तमत्त स्वा मांसान्यत्त ॥२,२४.४॥

हे सर्प तथा सर्प के अनुचर लुटेरो ! तुम्हारे द्वारा भेजी हुई यातनाएँ, असुर तथा हथियार हमारे समीप से बार-बार वापस चले जाएँ तथा आपके चोर आदि अनुचर भी वापस जाएँ ।आपको जिस व्यक्ति ने हमारे समीप भेजा है या आप अपने दल-बल के साथ हमारे जिस शत्रु के समीप रहते हैं, आप उसके ही मांस का भक्षण करें ॥२,२४.४॥

जूर्णि पुनर्वो यन्तु यातवः पुनर्हेतिः किमीदिनः ।
यस्य स्थ तमत्त यो वो प्राहैत्तमत्त स्वा मांसान्यत्त ॥२,२४.५॥

हे जूर्णि -शरीर को जीर्ण करने वाली राक्षसी और उनकी अनुचरी लुटेरियो ! तुम्हारे द्वारा भेजी हुई यातनाएँ, असुर तथा हथियार हमारे समीप से पुनः-पुनः वापस चले जाएँ। तुम्हें जिस व्यक्ति ने हमारे समीप भेजा है या जो तुम्हारे साथ हैं, तुम उसके ही मांस का भक्षण करो, स्वयं अपने मांस का भक्षण करो ॥२,२४.५॥

उपब्दे पुनर्वो यन्तु यातवः पुनर्हेतिः किमीदिनः ।
यस्य स्थ तमत्त यो वो प्राहैत्तमत्त स्वा मांसान्यत्त ॥२,२४.६॥

हे उपाब्द -चिंघाड़ने वाली लुटेरी राक्षसियो ! हमारी तरफ भेजी हुई तुम्हारी यातनाएँ, असुर तथा हथियार हमारे पास से पुनः-पुनः वापस चले जाएँ। तुम्हें जिस व्यक्ति ने हमारे समीप भेजा है या जो तुम्हारे साथ हैं, तुम उन्हीं का भक्षण करो, स्वयं अपने मांस का भक्षण करो ॥२,२४.६॥

अर्जुनि पुनर्वो यन्तु यातवः पुनर्हेतिः किमीदिनः ।
यस्य स्थ तमत्त यो वो प्राहैत्तमत्त स्वा मांसान्यत्त ॥२,२४.७॥

हे अर्जुनि लुटेरी राक्षसियो !तुम्हारे द्वारा भेजी हुई यातनाएँ, असुर तथा अस्त्र हमारे पास से लौट जाएँ। तुम्हें जिस व्यक्ति ने हमारे पास भेजा है या जो तुम्हारे साथ हैं, तुम उन्हीं का भक्षण करो, स्वयं अपने मांस का भक्षण करो ॥२,२४.७॥

भरूजि पुनर्वो यन्तु यातवः पुनर्हेतिः किमीदिनः ।
यस्य स्थ तमत्त यो वो प्राहैत्तमत्त स्वा मांसान्यत्त ॥२,२४.८॥

है अर्जुनि-नीच प्रकृति वाली लुटेरी राक्षसियो हमारी ओर प्रेरित की हुई तुम्हारी यातनाएँ, असुर तथा तुम्हारी किमोदिनी तथा अनुचारियां भी हमारे पास से पुन-पुनः वापस चले जाएँ। जिसने तुम्हे हमारे समीप भेजा है या जो तुम्हारे साथ है, तुम उन्हें दुष्टों का भक्षण करो, स्वयं अपने मांस का भक्षण करो ॥२,२४.८॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त २५- पृश्निपर्णी सूक्त

रोग को पराजित करने वाली जड़ी पश्निपणी का वर्णन

शं नो देवी पृश्निपर्ण्यशं निर्ऋत्या अकः ।
उग्रा हि कण्वजम्भनी तामभक्षि सहस्वतीम् ॥२,२५.१॥

यह दमकने वाली पृश्निपर्णी औषधि हमें सुख प्रदान करे और हमारे रोगों को दूर करे। यह विकराल रोगों का शमन न करने वाली है इसलिए हम उसे शक्तिशाली औषधि का सेवन करते हैं ॥२,२५.१॥

सहमानेयं प्रथमा पृश्निपर्ण्यजायत ।
तयाहं दुर्णाम्नां शिरो वृश्चामि शकुनेरिव ॥२,२५.२॥

रोगों पर विजय पाने वाली औषधियों में यह सबसे पहले उत्पन्न हुई। इसके द्वारा बुरे नामों वाले रोग के सिर को हम

उसी प्रकार कुचलते हैं, जिस प्रकार शक- दुष्ट राक्षस का सिर कुचलते हैं ॥२,२५.२॥

अरायमसृक्पावानं यश्च स्फातिं जिहीर्षति ।
गर्भादं कण्वं नाशय पृश्निपर्णि सहस्व च ॥२,२५.३॥

है पृश्निपर्णी औषधि आप शरीर की वृद्धि को अवरुद्ध करने वाले रोगों का नाश करें । हे पृश्निपर्णी ! आप गर्भ नष्ट करने वाले तथा गर्भ में न रहने वाले रोगों का भी नाश करें ॥२,२५.३॥

गिरिमेनामा वेशय कण्वान् जीवितयोपनान् ।
तांस्त्वं देवि पृश्निपर्ण्यग्निरिवानुदहन्न् इहि ॥२,२५.४॥

हे देवी पृश्निपर्णी जीवन-शक्ति को विनष्ट करने वाले दोषों तथा रोगों को आप पर्वत पर ले जाएँ और उनको दावाग्नि के समान भस्मसात् कर दें ॥२,२५.४॥

पराच एनान् प्र णुद कण्वान् जीवितयोपनान् ।
तमांसि यत्र गछन्ति तत्क्रव्यादो अजीगमम् ॥२,२५.५॥

हे पृश्निपर्णी ! जीवन-शक्ति को विनष्ट करने वाले रोगों को आप उलटा मुख करके ढकेल दें। सूर्योदय होने पर भी जिस स्थान पर अन्धकार रहता है, उस स्थान पर शरीर की धातुओं का भक्षण करने वाले दुष्ट रोगों को आपके माध्यम से हम दूर भेजते हैं ॥२,२५.५॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त २६- पशुसंवर्धन सूक्त

सविता देवता की प्रशंसा

एह यन्तु पशवो यह परेयुर्वायुर्येषां सहचारं जुजोष ।
त्वष्टा यहषां रूपधेयानि वेदास्मिन् तान् गोष्ठे सविता नि यछतु ॥२,२६.१॥

जो पशु इस स्थान से भटक गए हैं, वह पुन: इस गोष्ठ में चले आएँ। जिन पशुओं की सुरक्षा के लिए वायुदेव सहयोग करते हैं और जिनके नाम-रूप को त्वष्टादेव जानते हैं; हे सवितादेव ! आप उन पशुओं को गोष्ठ में स्थित करें ॥२,२६.१॥

इमं गोष्ठं पशवः सं स्रवन्तु बृहस्पतिरा नयतु प्रजानन् ।
सिनीवाली नयत्वाग्रमेषामाजग्मुषो अनुमते नि यछ ॥२,२६.२॥

गौ आदि पशु हमारे गोष्ठ में आ जाएँ बृहस्पतिदेव उन्हें लाने की विधि को जानते हैं, अत: वह उनको ले आएँ । सिनीवाली इन पशुओं को सामने के स्थान में ले आएँ । हे अनुमते ! आप आने वाले पशुओं को नियम में रखें ॥२,२६.२॥

सं सं स्रवन्तु पशवः समश्वाः समु पूरुषाः ।
सं धान्यस्य या स्फातिः संस्राव्येण हविषा जुहोमि ॥२,२६.३॥

गौ आदि पशु, अश्व तथा मनुष्य भी मिल-जुल कर चलें । हमारे यहाँ धान्य आदि की वृद्धि भली प्रकार हो । हम उसको प्राप्त करने के लिए घृत की आहुति प्रदान करते हैं ॥२,२६.३॥

सं सिञ्चामि गवां क्षीरं समाज्येन बलं रसम् ।
संसिक्ता अस्माकं वीरा ध्रुवा गावो मयि गोपतौ ॥२,२६.४॥

हम गौओं के दूध को सिंचित करते हैं तथा शक्तिवर्द्धक रस को घृत के साथ मिलाते हैं । हमारे वीर पुत्र घृत आदि से सिंचित हों तथा मुझ गोपति के पास गौएँ स्थिर रहें ॥२,२६.४॥

आ हरामि गवां क्षीरमाहार्षं धान्यं रसम् ।
आहृता अस्माकं वीरा आ पत्नीरिदमस्तकम् ॥२,२६.५॥

हम अपने घर में गो-दुग्ध, धान्य तथा रस लाते हैं। हम अपने वीरपुत्रों तथा पत्नियों को भी घर में लाते हैं ॥२,२६.५॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त २७- शत्रुपराजय सूक्त

ग्वारपाठा नामक जड़ी का वर्णन

नेच्छत्रुः प्राशं जयाति सहमानाभिभूरसि ।
प्राशं प्रतिप्राशो जह्यरसान् कृण्वोषधे ॥२,२७.१॥

हे औषधे आपका सेवन करने वाले हम मनुष्यों को प्रतिवादी शत्रु कभी विजित न कर सकें, क्योंकि आप शत्रुओं से टक्कर लेकर उन्हें वशीभूत करने वाली हैं। आप हमारे द्वारा प्राशन-ग्रहण करने पर प्रतिपक्षियों को परास्त करें। हे औषधे ! आप प्रतिवादियों के कण्ठ को शोषित करें अर्थात् उन्हें बोलने में असमर्थ करें ॥२,२७.१॥

सुपर्णस्त्वान्वविन्दत्सूकरस्त्वाखनन् नसा ।
प्राशं प्रतिप्राशो जह्यरसान् कृण्वोषधे ॥२,२७.२॥

हे औषधे ! गरुड़ ने आपको विष नष्ट करने के लिए प्राप्त किया है तथा सूअर ने अपनी नाक के द्वारा आपको खोदा हैं । आप हमारे द्वारा प्राशन-ग्रहण करने पर प्रतिपक्षियों को परास्त करें। हे औषधे ! आप प्रतिवादियों के कण्ठ को शोषित करें अर्थात् उन्हें बोलने में असमर्थ करें ॥२,२७.२॥

इन्द्रो ह चक्रे त्वा बाहावसुरेभ्य स्तरीतवे ।
प्राशं प्रतिप्राशो जह्यरसान् कृण्वोषधे ॥२,२७.३॥

हे औषधे ! राक्षसों से अपनी सुरक्षा करने के लिए इन्द्रदेव ने आपको अपनी बाहु पर धारण किया था। आप हमारे द्वारा प्राशन-ग्रहण करने पर प्रतिपक्षियों को परास्त करें। हे औषधे ! आप प्रतिवादियों के कण्ठ को शोषित करें अर्थात् उन्हें बोलने में असमर्थ करें ॥२,२७.३॥

पाटामिन्द्रो व्याश्नादसुरेभ्य स्तरीतवे ।
प्राशं प्रतिप्राशो जह्यरसान् कृण्वोषधे ॥२,२७.४॥

हे पाठा औषधे ! राक्षसों से अपनी सुरक्षा करने के लिए इन्द्रदेव ने आपका सेवन किया था। आप हमारे द्वारा प्राशन-ग्रहण करने पर प्रतिपक्षियों को परास्त करें। हे औषधे ! आप प्रतिवादियों के कण्ठ को शोषित करें अर्थात् उन्हें बोलने में असमर्थ करें ॥२,२७.४॥

तयाहं शत्रून्त्साक्ष इन्द्रः सालावृकामिव ।
प्राशं प्रतिप्राशो जह्यरसान् कृण्वोषधे ॥२,२७.५॥

जिस प्रकार इन्द्रदेव ने जंगली कुत्तों को निरुत्तर कर दिया था, उसी प्रकार हे औषधे ! आपका सेवन करके हम प्रतिवादी शत्रुओं को निरुत्तर करते हैं। आप हमारे द्वारा प्राशन-ग्रहण करने पर प्रतिपक्षियों को परास्त करें। हे औषधे ! आप प्रतिवादियों के कण्ठ को शोषित करें अर्थात् उन्हें बोलने में असमर्थ करें ॥२,२७.५॥

रुद्र जलाषभेषज नीलशिखण्ड कर्मकृत्।
प्राशं प्रतिप्राशो जह्यरसान् कृण्वोषधे ॥२,२७.६॥

हे रुद्र ! आप जल द्वारा चिकित्सा करने वाले तथा नील वर्ण की शिखा वाले हैं। आप सृष्टि आदि (सृष्टि, स्थिति, संहार, प्रलय तथा अनुग्रह) पंच कृत्यों को सम्पन्न करने वाले हैं। आप हमारे द्वारा सेवन की जाने वाली इस औषधि को, प्रतिपक्षियों को परास्त करने में समर्थ करें । आप हमारे द्वारा प्राशन-ग्रहण करने पर प्रतिपक्षियों को परास्त करें। हे औषधे ! आप प्रतिवादियों के कण्ठ को शोषित करें अर्थात् उन्हें बोलने में असमर्थ करें ॥२,२७.६॥

तस्य प्राशं त्वं जहि यो न इन्द्राभिदासति ।
अधि नो ब्रूहि शक्तिभिः प्राशि मामुत्तरं कृधि ॥२,२७.७॥

हे इन्द्रदेव जो प्रतिवादी अपनी युक्तियों के द्वारा हमें कमजोर करना चाहते हैं, उनके प्राशनों को आप निरस्त करे और अपनी सामर्थ्य के द्वारा हमें सर्वश्रेष्ठ बनाएँ ॥२,२७.७॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त २८- दीर्घायु प्राप्ति सूक्त

अग्नि देव की स्तुति

तुभ्यमेव जरिमन् वर्धतामयं मेममन्ये मृत्यवो हिंसिषुः शतं यह ।
मातेव पुत्रं प्रमना उपस्थे मित्र एनं मित्रियात्पात्वंहसः ॥२,२८.१॥

हे वृद्धावस्थे ! आपके लिए ही यह बालक वृद्धि को प्राप्त हो और जो सैकड़ों रोग आदि रूप वाले मृत्यु योग हैं, वह इसको हिंसित न करें। हर्षित मन वाले हे मित्र देवता ! जिस प्रकार माता अपने पुत्र को गोद में लेती है, उसी प्रकार आप इस बालक को मित्र – द्रोह सम्बन्धी पाप से मुक्त करें ॥२,२८.१॥

मित्र एनं वरुणो वा रिशादा जरामृत्युं कृणुतां संविदानौ ।

तदग्निर्होता वयुनानि विद्वान् विश्वा देवानां जनिमा विवक्ति ॥२,२८.२॥

मित्र तथा शत्रु विनाशक वरुणदेव दोनों संयुक्त होकर इस बालक को वृद्धावस्था तक पहुँच कर मरने वाला बनाएँ ।दान दाता तथा समस्त कर्मों को विधिवत् जानने वाले अग्निदेव उसके लिए दीर्घायु की प्रार्थना करें ॥२,२८.२॥

त्वमीशिषे पशूनां पार्थिवानां यह जाता उत वा यह जनित्राः ।
मेमं प्राणो हासीन् मो अपानो मेमं मित्रा वधिषुर्मो अमित्राः ॥२,२८.३॥

हे अग्ने ! धरती पर पैदा हुए तथा पैदा होने वाले समस्त प्राणियों के आप स्वामी हैं। आपकी अनुकम्पा से इस बालक का, प्राण और अपान परित्याग न करें । इसको न मित्र मारें और न शत्रु ॥२,२८.३॥

द्यौष्ट्वा पिता पृथिवी माता जरामृत्युं कृणुतां संविदाने ।

यथा जीवा अदितेरुपस्थे प्राणापानाभ्यां गुपितः शतं हिमाः ॥२,२८.४॥

हे बालक ! तुम धरती की गोद में प्राण और अपान से संरक्षित होकर सैकड़ों वर्षों तक जीवित रहो । पिता रूप द्युलोक तथा माता रूप पृथ्वी दोनों मिलकर आपको वृद्धावस्था के बाद मरने वाला बनाएँ ॥२,२८.४॥

इममग्ने आयुषे वर्चसे नय प्रियं रेतो वरुण मित्र राजन् ।
मातेवास्मा अदिते शर्म यच्छ विश्वे देवा जरदष्टिर्यथासत्॥२,२८.५॥

हे अग्निदेव ! आप इस बालक को शतायु तथा तेजस् प्रदान करें । हे मित्रावरुण ! आप इस बालक को सन्तानोत्पादन में समर्थ बनाएँ । हे अदिति देवि ! आप इस बालक को माता के समान हर्ष प्रदान करें । हे विश्वेदेवो !आप सब इस बालक को सभी गुणों से सम्पन्न बनाएँ तथा दीर्घ आयुष्य प्रदान करें ॥२,२८.५॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त २९- दीर्घायुष्य सूक्त

अग्नि, सूर्य और इंद्र की स्तुति

पार्थिवस्य रसे देवा भगस्य तन्वो बले ।
आयुष्यमस्मा अग्निः सूर्यो वर्च आ धाद्बृहस्पतिः ॥२,२९.१॥

पार्थिव रस (पृथ्वी से उत्पन्न अथवा पार्थिव शरीर से उत्पन्न पोषक रसों) का पान करने वाले व्यक्ति को समस्तदेव 'भग' के समान बलशाली बनाएँ । अग्निदेव इसको सौ वर्ष की आयु प्रदान करें और आदित्य इसे तेजस् प्रदान करें तथा बृहस्पतिदेव इसे वेदाध्ययनजन्य कान्ति (ब्रह्मवर्चस) प्रदान करें ॥२,२९.१॥

आयुरस्मै धेहि जातवेदः प्रजां त्वष्टरधिनिधेहि अस्मै ।
रायस्पोषं सवितरा सुवास्मै शतं जीवाति शरदस्तवायम् ॥२,२९.२॥

हे जातवेदा अग्निदेव ! आप इसे शतायु प्रदान करें । हे त्वष्टादेव ! आप इसे पुत्र-पौत्र आदि प्रदान करें । हे सवितादेव ! आप इसे ऐश्वर्य तथा पुष्टि प्रदान करें । आपकी अनुकम्पा प्राप्त करके यह मनुष्य सैकड़ों वर्षों तक जीवित रहे ॥२,२९.२॥

आशीर्ण ऊर्जमुत सौप्रजास्त्वं दक्षं धत्तं द्रविणं सचेतसौ ।
जयं क्षेत्राणि सहसायमिन्द्र कृण्वानो अन्यान् अधरान्त्सपत्नान् ॥२,२९.३॥

हे द्यावा-पृथिवि ! आप हमें आशीर्वाद प्रदान करें। आप हमें श्रेष्ठ सन्तान, सामर्थ्य, कुशलता तथा ऐश्वर्य प्रदान करें । हे इन्द्रदेव ! आपकी कृपा से यह व्यक्ति अपनी सामर्थ्य के द्वारा शत्रुओं को विजित करे और उनके स्थानों को अपने नियंत्रण में ले ले ॥२,२९.३॥

इन्द्रेण दत्तो वरुणेन शिष्टो मरुद्भिरुग्रः प्रहितो नो आगन् ।
एष वां द्यावापृथिवी उपस्थे मा क्षुधन् मा तृषत्॥२,२९.४॥

इन्द्रदेव द्वारा आयुष्य पाकर, वरुण द्वारा शासित होकर तथा मरुतों द्वारा प्रेरणा पाकर यह व्यक्ति हमारे पास आया है । हे द्यावा-पृथिवि ! आपकी गोद में रहकर यह व्यक्ति क्षुधा और तृषा से पीड़ित न हो ॥२,२९.४॥

ऊर्जमस्मा ऊर्जस्वती धत्तं पयो अस्मै पयस्वती धत्तम् ।
ऊर्जमस्मै द्यावपृथिवी अधातां विश्वे देवा मरुत ऊर्जमापः
॥२,२९.५॥

हे बलशाली द्यावा-पृथिवि ! आप इस व्यक्ति को अन्न तथा जल प्रदान करें। हे द्यावा-पृथिवि ! आपने इस व्यक्ति को अन्न-बल प्रदान किया है और विश्वेदेवा, मरुद्गण तथा जलदेव ने भी इसको शक्ति प्रदान की है ॥२,२९.५॥

शिवाभिष्टे हृदयं तर्पयाम्यनमीवो मोदिषीष्ठाः सुवर्चाः ।
सवासिनौ पिबतां मन्थमेतमश्विनो रूपं परिधाय मायाम्
॥२,२९.६॥

हे तृषार्त मनुष्य ! हम आपके शुष्क हृदय को कल्याणकारी जले से तृप्त करते हैं। आप नीरोग तथा श्रेष्ठ तेज से युक्त होकर हर्षित हों । एक वस्त्र धारण करने वाले यह रोगी, अश्विनीकुमारों के माया (कौशल) को ग्रहणकरके इस रस का पान करें ॥२,२९.६॥

इन्द्र एतां ससृजे विद्धो अग्र ऊर्जां स्वधामजरां सा त एषा ।
तया त्वं जीव शरदः सुवर्चा मा त आ सुस्रोद्भिषजस्ते अक्रन्
॥२,२९.७॥

इन्द्रदेव ने इस (रस) को तृषा से निवृत्त होने के लिए विनिर्मित किया था। हे रोगिन् !'जो रस आपको प्रदान किया है, उसके द्वारा आप शक्ति-तेजस् से सम्पन्न होकर सौ वर्ष तक जीवित रहें । यह आपके शरीर से अलग नहो। आपके लिए वैद्यों ने श्रेष्ठ औषधि बनाई है ॥२,२९.७॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त ३०- कामिनीमनोऽभिमुखीकरण सूक्त

अश्विनीकुमारों की स्तुति

यथेदं भूम्या अधि तृणं वातो मथायति ।
एवा मथ्नामि ते मनो यथा मां कामिन्यसो यथा मन् नापगा असः ॥२,३०.१॥

हे स्त्री ! जिस प्रकार भूमि पर विद्यमान तृण को वायु चक्कर कटाता है, उसी प्रकार हम आपके हृदय को मथते हैं। जिससे आप हमारी कामना करने वाली हों और हमें छोड़कर दूसरी जगह न जाएँ ॥२,३०.१॥

सं चेन् नयाथो अश्विना कामिना सं च वक्षथः ।
सं वां भगासो अग्मत सं चित्तानि समु व्रता ॥२,३०.२॥

हे अश्विनीकुमारो ! हम जिस वस्तु की कामना करते हैं, आप उसको हमारे पास पहुँचाएँ । आप दोनों के भाग्य, चित्त तथा व्रत हमसे संयुक्त हो जाएँ ॥२,३०.२॥

यत्सुपर्णा विवक्षवो अनमीवा विवक्षवः ।
तत्र मे गछताद्धवं शल्य इव कुल्मलं यथा ॥२,३०.३॥

मनोहर पक्षी की आकर्षक बोली और नीरोग मनुष्य के प्रभावशाली वचन के समान हमारी पुकार बाण के सदृश अपने लक्ष्य पर पहुँचे ॥२,३०.३॥

यदन्तरं तद्बाह्यं यद्बाह्यं तदन्तरम् ।
कन्यानां विश्वरूपाणां मनो गृभायौषधे ॥२,३०.४॥

जो अन्दर और बाहर से एक विचार वाली हैं-ऐसे दोषरहित अंगों वाली कन्याओं के पवित्र मन को हे औषधे ! आप ग्रहण करें ॥२,३०.४॥

एयमगन् पतिकामा जनिकामोऽहमागमम् ।
अश्वः कनिक्रदद्यथा भगेनाहं सहागमम् ॥२,३०.५॥

यह स्त्री पति की कामना करती हुई मेरे पास आई है और मैं उस स्त्री की अभिलाषा करते हुए उसके समीप पहुँचा हूँ। हिनहिनाते हुए अश्व के समान मैं ऐश्वर्य के साथ उसके समीप आया हूँ ॥२,३०.५॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त ३१- कृमिजम्भन सूक्त

मही देवता द्वारा कीटाणुओं का नाश

इन्द्रस्य या मही दृषल्क्रिमेर्विश्वस्य तर्हणी ।
तया पिनष्मि सं क्रिमीन् दृषदा खल्वामिव ॥२,३१.१॥

इन्द्रदेव की जो विशाल शिला है, वह समस्त कीटाणुओं को विनष्ट करने वाली है। उसके द्वारा हम कीटाणुओं को उसी प्रकार पीसते हैं, जिस प्रकार पत्थर के द्वारा चना पीसा जाता है ॥२,३१.१॥

दृष्टमदृष्टमतृहमथो कुरूरुमतृहम् ।
अल्गण्डून्त्सर्वान् छलुनान् क्रिमीन् वचसा जम्भयामसि ॥२,३१.२॥

आँखों से दिखाई देने वाले तथा न दिखाई देने वाले कीटों को हम विनष्ट करते हैं। जमीन पर चलने वाले, बिस्तर आदि में निवास करने वाले तथा द्रुतगति से इधर-उधर घूमने वाले समस्त कीटों को हम 'वाचा' (वाणी-मन्त्रशक्ति अथवा वच से बनीं औषधि) के द्वारा विनष्ट करते हैं ॥२,३१.२॥

अल्गाण्डून् हन्मि महता वधेन दूना अदूना अरसा अभूवन् । शिष्टान् अशिष्टान् नि तिरामि वाचा यथा क्रिमीणां नकिरुच्छिषातै ॥२,३१.३॥

अनेक स्थानों में रहने वाले कीटाणुओं को हम बृहत् साधन रूप मंत्र के द्वारा विनष्ट करते हैं। चलने वाले तथा न चलने वाले समस्त कीटाणु सूखकर विनष्ट हो गए हैं। बचे हुए तथा न बचे हुए कीटाणुओं को हम वाचा (वाणी-मंत्रशक्ति अथवा वच से बनी औषधि) के द्वारा विनष्ट करते हैं ॥२,३१.३॥

अन्वान्त्र्यं शीर्षण्यमथो पार्ष्टेयं क्रिमीन् ।

अवस्कवं व्यध्वरं क्रिमीन् वचसा जम्भयामसि ॥२,३१.४॥

आँतों में, सिर में और पसलियों में रहने वाले कीटाणुओं को हम विनष्ट करते हैं। रेंगने वाले और विविध मार्ग बनाकर चलने वाले कीटाणुओं को भी हम 'वाचा' से विनष्ट करते हैं ॥२,३१.४॥

यह क्रिमयः पर्वतेशु वनेष्वोषधीषु पशुष्वप्स्वन्तः ।
यह अस्माकं तन्वमाविविशुः सर्वं तद्धन्मि जनिम क्रिमीणाम् ॥२,३१.५॥

वनों, पहाड़ों, औषधियों तथा पशुओं में रहने वाले कीटाणुओं और हमारे शरीर में प्रविष्ट होने वाले कीटाणुओं की समस्त उत्पत्ति को हम विनष्ट करते हैं ॥२,३१.५॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त ३२- कृमिनाशन सूक्त

सूर्य की किरणों द्वारा कीटाणुओं का नाश

उद्यन्न् आदित्यः क्रिमीन् हन्तु निम्रोचन् हन्तु रश्मिभिः ।
यह अन्तः क्रिमयो गवि ॥२,३२.१॥

उदित होते हुए तथा अस्त होते हुए सूर्यदेव अपनी किरणों के द्वारा जो कीटाणु पृथ्वी पर रहते हैं, उन समस्त कीटाणुओं को विनष्ट करें ॥२,३२.१॥

विश्वरूपं चतुरक्षं क्रिमिं सारङ्गमर्जुनम् ।
शृणाम्यस्य पृष्टीरपि वृश्चामि यच्छिरः ॥२,३२.२॥

विविध रूप वाले, चार अश्वों वाले, रेंगने वाले तथा सफेद रंग वाले कीटाणुओं की हड्डियों तथा सिर को हम तोड़ते हैं ॥२,३२.२॥

अत्रिवद्वः क्रिमयो हन्मि कण्ववज्जमदग्निवत्।
अगस्त्यस्य ब्रह्मणा सं पिनष्म्यहं क्रिमीन् ॥२,३२.३॥

हे कृमियो ! हम अत्रि, कण्व और जमदग्नि ऋषि के सदृश, मंत्र शक्ति से तुम्हें मारते हैं तथा अगस्त्य ऋषि की मंत्र शक्ति से तुम्हें पीस डालते हैं ॥२,३२.३॥

हतो राजा क्रिमीणामुतैषां स्थपतिर्हतः ।
हतो हतमाता क्रिमिर्हतभ्राता हतस्वसा ॥२,३२.४॥

हमारे द्वारा औषधि प्रयोग करने पर कीटाणुओं का राजा तथा उसका मंत्री मारा गया । वह अपने माता-पिता, भाई-बहन सहित स्वयं भी मारा गया ॥२,३२.४॥

हतासो अस्य वेशसो हतासः परिवेशसः ।
अथो यह क्षुल्लका इव सर्वे ते क्रिमयो हताः ॥२,३२.५॥

इन कीटाणुओं के बैठने वाले स्थान तथा पास के घर विनष्ट हो गए और बीजरूप में विद्यमान दुर्लक्षित (कठिनाई से दिखाई पड़ने वाले) छोटे-छोटे कीटाणु भी नष्ट हो गए ॥२,३२.५॥

प्र ते शृणामि शृङ्गे याभ्यां वितुदायसि ।
भिनाद्मि ते कुषुम्भं यस्ते विषधानः ॥२,३२.६॥

हे कीटाणुओ ! हम तुम्हारे उन सींगों को तोड़ते हैं, जिनके द्वारा तुम पीड़ा पहुँचाते हो। हम तुम्हारे कुषुम्भ (विष ग्रन्थि) को तोड़ते हैं, जिसमें तुम्हारा विष रहता हैं ॥२,३२.६॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त ३३- यक्ष्मविबर्हण सूक्त

यक्ष्मा रोग का विनाश

अक्षीभ्यां ते नासिकाभ्यां कर्णाभ्यां छुबुकादधि ।
यक्ष्मं शीर्षण्यं मस्तिष्काज्जिह्वाया वि वृहामि ते ॥२,३३.१॥

हे रोगिन् ! आपके दोनों नेत्रों, दोनों कानों, दोनों नासिका रन्धों, ठोढ़ी, सिर, मस्तिष्क और जिह्वा से हम यक्ष्मारोग को दूर करते हैं ॥२,३३.१॥

ग्रीवाभ्यस्त उष्णिहाभ्यः कीकसाभ्यो अनूक्यात्।
यक्ष्मं दोषण्यमंसाभ्यां बाहुभ्यां वि वृहामि ते ॥२,३३.२॥

हे रोग से ग्रस्त मनुष्य ! आपकी गर्दन की नाड़ियों, ऊपरी स्नायुओं, अस्थियों के संधि भागों, कन्धों, भुजाओं और अन्तर्भाग से हम यक्ष्मारोग का विनाश करते हैं ॥२,३३.२॥

हृदयात्ते परि क्लोम्नो हलीक्ष्णात्पार्श्वाभ्याम् ।
यक्ष्मं मतस्नाभ्यां प्लीह्नो यक्नस्ते वि वृहामसि ॥२,३३.३॥

हे व्याधिग्रस्त मानव ! हम आपके हृदय, फेफड़ों, पित्ताशय, दोनों पसलियों, गुर्दो, तिल्ली तथा जिगर से यक्ष्मारोग को दूर करते हैं ॥२,३३.३॥

आन्त्रेभ्यस्ते गुदाभ्यो वनिष्ठोरुदरादधि ।
यक्ष्मं कुक्षिभ्यां प्लाशेर्नाभ्या वि वृहामि ते ॥२,३३.४॥

आपकी आँतों, गुदा, नाड़ियों, हृदयस्थान, मूत्राशय, यकृत और अन्यान्य पाचनतंत्र के अवयवों से हम यक्ष्मारोग का निवारण करते हैं ॥२,३३.४॥

ऊरुभ्यां ते अष्ठीवद्भ्यां पार्ष्णिभ्यां प्रपदाभ्याम् ।
यक्ष्मं भसद्यं श्रोणिभ्यां भासदं भंससो वि वृहामि ते
॥२,३३.५॥

हे रोगिन् ! आपकी दोनों जंघाओं, जानुओं, एड़ियों, पंजों, नितम्बभागों, कटिभागों और गुदा द्वार से हम यक्ष्मारोग को दूर करते हैं ॥२,३३.५॥

अस्थिभ्यस्ते मज्जभ्यः स्नावभ्यो धमनिभ्यः ।
यक्ष्मं पाणिभ्यामङ्गुलिभ्यो नखेभ्यो वि वृहामि ते
॥२,३३.६॥

हम अस्थि, मज्जा, स्नायुओं, धमनियों, पुट्ठों, हाथों, अँगुलियों तथा नाखूनों से यक्ष्मारोग को दूर करते हैं॥२,३३.६॥

अङ्गेअङ्गे लोम्निलोम्नि यस्ते पर्वणिपर्वणि ।
यक्ष्मं त्वचस्यं ते वयं कश्यपस्य वीबर्हेण विष्वञ्चं वि वृहामसि
॥२,३३.७॥

प्रत्येक अंग, प्रत्येक लोम और शरीर के प्रत्येक संधि भाग में, जहाँ कहीं भी यक्ष्मा रोग का निवास है, वहाँ से हम उसे दूर करते हैं ॥२,३३.७॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त ३४- पशुगण सूक्त

शिव जी तथा विश्वकर्मा की स्तुति

य ईशे पशुपतिः पशूनां चतुष्पदामुत यो द्विपदाम् ।
निष्क्रीतः स यज्ञियं भागमेतु रायस्पोषा यजमानं सचन्ताम् ॥२,३४.१॥

जो पशुपति (शिव) दो पैर वाले मनुष्यों तथा चार पैर वाले पशुओं के स्वामी हैं, वह सम्पूर्ण रूप से ग्रहण किए हुए यज्ञीय भाग को प्राप्त करें और मुझे यजमान को ऐश्वर्य तथा पुष्टि प्रदान करें ॥२,३५.१॥

प्रमुञ्चन्तो भुवनस्य रेतो गातुं धत्त यजमानाय देवाः ।
उपाकृतं शशमानं यदस्थात्प्रियं देवानामप्येतु पाथः ॥२,३४.२॥

हे देवो ! आप इस यजमान को विश्व का रेतस् (उत्पादक रस) प्रदान करके इसे सन्मार्ग पर चलाएँ और देवों का प्रिय तथा सुसंस्कृत सोम रूप अन्न हमें प्रदान करें ॥२,३५.२॥

यह बध्यमानमनु दीध्याना अन्वैक्षन्त मनसा चक्षुषा च ।
अग्निष्टान् अग्रे प्र मुमोक्तु देवो विश्वकर्मा प्रजया संरराणः ॥२,३४.३॥

जो आलोकमान जीव इस बद्ध जीव का मन तथा चक्षु से अवलोकन करते हैं, उन्हें वह विश्वकर्मा देव सबसे पहले विमुक्त करें ॥२,३५.३॥

यह ग्राम्याः पशवो विश्वरूपा विरूपाः सन्तो बहुधैकरूपाः ।
वायुष्टान् अग्रे प्र मुमोक्तु देवः प्रजापतिः प्रजया संरराणः ॥२,३४.४॥

ग्राम के जो अनेकों रूप-रंग वाले पशु बहुरूपता होने पर भी एक जैसे दिखलाई पड़ते हैं, उनको भी प्रजा के साथ निवास करने वाले प्रजापालक प्राणदेव सबसे पहले मुक्त करें ॥२,३५.४॥

प्रजानन्तः प्रति गृह्णन्तु पूर्वे प्राणमङ्गेभ्यः पर्याचरन्तम् ।
दिवं गछ प्रति तिष्ठा शरीरैः स्वर्गं याहि पथिभिर्देवयानैः ॥२,३४.५॥

विशेषज्ञ विद्वान्, चारों ओर विचरण करने वाले प्राण को समस्त अंगों से इकट्ठा करके स्वस्थ जीवनयापन करते हैं। उसके बाद देवताओं के गमन पथ से स्वर्ग को जाते हैं तथा आलोकमान स्थानों को प्राप्त होते हैं ॥२,३५.५॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त ३५-विश्वकर्मा सूक्त

विश्वकर्मा की स्तुति

यह भक्षयन्तो न वसून्यानृधुर्यान् अग्नयो अन्वतप्यन्त धिष्ण्याः ।
या तेषामवया दुरिष्टिः स्विष्टिं नस्तां कृणवद्विश्वकर्मा ॥२,३५.१॥

यज्ञ कार्य में धन खर्च न करके, भक्षण कार्य में धन खर्च करने के कारण हम समृद्ध नहीं हुए इस प्रकार हम यज्ञ न करने वाले, और दुर्यज्ञ करने वाले हैं। अत: हमारी श्रेष्ठ यज्ञ करने की अभिलाषा को विश्वकर्मादेव पूर्ण करें ॥२,३५.१॥

यज्ञपतिमृषयः एनसाहुर्निर्भक्तं प्रजा अनुतप्यमानम् ।

मथव्यान्त्स्तोकान् अप यान् रराध सं नष्टेभिः सृजतु विश्वकर्मा ॥२,३५.२॥

प्रजाओं के विषय में अनुताप करने वाले यज्ञपति को मेष पाप से अलग बताते हैं। जिन विश्वकर्मा ने सोमरस की बूंदों को आत्मसात् किया है, वह विश्वकर्मादेव उन बूंदों से हमारे यज्ञ को संयुक्त करें ॥२,३५.२॥

अदान्यान्त्सोमपान् मन्यमानो यज्ञस्य विद्वान्त्समयह न धीरः। यदेनश्चकृवान् बद्ध एष तं विश्वकर्मन् प्र मुञ्चा स्वस्तयह ॥२,३५.३॥

जो व्यक्ति दान न करके मनमाने ढंग से सोमपान करता है, वह न नो यज्ञ को जानता है और न धैर्यवान् होता है । ऐसा व्यक्ति बद्ध होकर पाप करता है । हे विश्वकर्मादेव ! आप उसे कल्याण के लिए पाप-बन्धनों से मुक्त करें ॥२,३५.३॥

घोरा ऋषयो नमो अस्त्वेभ्यश्चक्षुर्यदेषां मनसश्च सत्यम् ।
बृहस्पतयह महिष द्युमन्न् नमो विश्वकर्मन् नमस्ते पाह्यस्मान् ॥२,३५.४॥

ऋषिगण अत्यन्त तेजस्वी होते हैं, क्योंकि उनके आँखों तथा मनों में सत्य प्रकाशित होता है । ऐसे ऋषियों को हम प्रणाम करते हैं तथा देवताओं के पालन करने वाले बृहस्पतिदेव को भी प्रणाम करते हैं। हे महान् विश्वकर्मा देव ! हम आपको प्रणाम करते हैं; आघ हमारी सुरक्षा करें ॥२,३५.४॥

यज्ञस्य चक्षुः प्रभृतिर्मुखं च वाचा श्रोत्रेण मनसा जुहोमि ।
इमं यज्ञं विततं विश्वकर्मणा देवा यन्तु सुमनस्यमानाः ॥२,३५.५॥

जो अग्निदेव यज्ञ के नेत्र स्वरूप पोषणकर्ता तथा मुख के समान हैं, उन (अग्निदेव) के प्रति हम मने, श्रोत्र तथा वचनों सहित हव्य समर्पित करते हैं । विश्वकर्मा देव के द्वारा किए गए इस यज्ञ के लिए श्रेष्ठ मन वाले देव पधारें ॥२,३५.५॥

॥अथर्ववेद – द्वितीय काण्डम्॥

सूक्त ३६- पतिवेदन सूक्त

अग्नि, सोम तथा वरुण की स्तुति

आ नो अग्ने सुमतिं संभलो गमेदिमां कुमारीं सह नो भगेन।
जुष्टा वरेषु समनेषु वल्गुरोषं पत्या सौभगमस्तु अस्यै
॥२,३६.१॥

हे अग्ने ! हमारी इस बुद्धिमती कुमारी कन्या को ऐश्वर्य के साथ सर्वगुण सम्पन्न वर प्राप्त हो। हमारी कन्या बड़ों के बीच में प्रिय तथा समान विचार वालों में मनोरम है । इसे पति के साथ रहने का सौभाग्य प्राप्त हो ॥२,३६.१॥

सोमजुष्टं ब्रह्मजुष्टमर्यम्ना संभृतं भगम् ।
धातुर्देवस्य सत्येन कृणोमि पतिवेदनम् ॥२,३६.२॥

सोमदेव और गन्धर्वदेव द्वारा सेवित तथा अर्यमा नामक अग्नि द्वारा स्वीकृत कन्या रूप धन को हम सत्य वचन से पति द्वारा प्राप्त करने के योग्य बनाते हैं ॥२,३६.२॥

इयमग्ने नारी पतिं विदेष्ट सोमो हि राजा सुभगां कृणोति ।
सुवाना पुत्रान् महिषी भवाति गत्वा पतिं सुभगा वि राजतु
॥२,३६.३॥

हे अग्निदेव ! यह कन्या अपने पति को प्राप्त करें और राजा सोम इसे सौभाग्यवती बनाएँ। यह कन्या अपने पति को प्राप्त करके सुशोभित हो और (वीर) पुत्रों को जन्म देती हुई घर की रानी बने ॥२,३६.३॥

यथाखरो मघवंश्चारुरेष प्रियो मृगाणां सुषदा बभूव ।
एवा भगस्य जुष्टेयमस्तु नारी संप्रिया पत्याविराधयन्ती
॥२,३६.४॥

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार गुफा का स्थान मृगों के लिए प्रिय तथा बैठने योग्य होता है, उसी प्रकार यह वो अपने पति से

विरोध न करती हुई तथा समस्त भोग्य वस्तुओं का सेवन करती हुई अपने पति के लिए प्रीतियुक्त हों ॥२,३६.४॥

भगस्य नावमा रोह पूर्णामनुपदस्वतीम् ।
तयोपप्रतारय यो वरः प्रतिकाम्यः ॥२,३६.५॥

हे कन्ये ! आप इच्छित तथा अविनाशी ऐश्वर्य से परिपूर्ण हुई नौका पर चढ़कर, उसके द्वारा अपने अभिलषित पति के पास पहुँचें ॥२,३६.५॥

आ क्रन्दय धनपते वरमामनसं कृणु ।
सर्वं प्रदक्षिणं कृणु यो वरः प्रतिकाम्यः ॥२,३६.६॥

हे धनपते वरुणदेव ! आप इस वर के द्वारा उद्घोष कराएँ कि यह कन्या हमारी पत्नी हो । आप इस वर को कन्या के सामने बुलाकर उसके मन को कन्या की ओर प्रेरित करें तथा उसे अनुरूप व्यवहार वाला बनाएँ ॥२,३६.६॥

इदं हिरण्यं गुल्गुल्वयमौक्षो अथो भगः ।
एते पतिभ्यस्त्वामदुः प्रतिकामाय वेत्तवे । ॥२,३६.७ ॥

हे कन्ये ! यह स्वर्णिम आभूषण, गूगल की धूप तथा लेपन करने वाले औक्ष (उपलेपन द्रव्य) को अलंकार के स्वामी भग देवता आपकी पति-कामना की पूर्ति तथा आपके लाभ के लिए आपके पति को प्रदान करते हैं ॥२,३६.७॥

आ ते नयतु सविता नयतु पतिर्यः प्रतिकाम्यः ॥२,३६.७ ॥

हे औषधे ! आप इस कन्या को पति प्रदान करें । हे कन्ये ! सवितादेव इस वर को आपके समीप लाएँ। आपका इच्छित पति आपके साथ विवाह करके आपको अपने घर ले जाए ॥२,३६.८॥

॥ इति द्वितीय काण्डम्॥